Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिशिष्ट

(ख) पारिभाषिक शब्दों की अनुक्रमणिका

अ

अग्र Apex

अग्रस्थित (कलिका) Terminal 31

अण्ड-यंत्र Egg Apparatus 123

अण्डाकार (पत्ती) Elliptical 65

अंतर्मुखी (लिंगकुंज) Introrse 98

अंतर्जात Endogenous 22

अंतर्नालीय (पुंखपत्र) Interpetiolar 56

अंतराकृतिक विभाग Internal morphology 8

अंतरावरण Intine 125

अंतः बीजावरण Tegmen 141

अनियमित (पुष्प) Irregular 91

,, (जड़) Adventitious 26

अनुद्भूत (कलिका) Dormant 33

अपरिमित (पुष्प-व्यूह) Cymose 78

,, (शाखाक्रम) ,, 44

अपूर्ण (पुष्प) Incomplete 96

अबीजोत्कृष्ट Pteridophyta 12

अर्द्धचन्द्राकार Lunate 64

अर्द्धतनासक्त Semi-amplexicaul 57

अर्सिओलेट Urceolate 93

अलैंगिक (उत्पत्ति) Asexual 112

अवयव Member

अवयव-विभाजन Segmentation

अस्फोटी (फल) Indehiscent 132

अक्षकोण Axil

अक्षकोणीय (कलिका) 32

आ

आच्छादित Imbricate 95

आत्म-सेचन Self-pollination 114

आधारीय (बीजक्रम) Basal 105

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Ramma Deo

Ayurvedic college

B. H. U

Ramesh Chandra

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आफसेट Offset 36
आभ्यान्तराकृतिक विभाग Histology 8
आयताकार (पत्ती) Oblong 65
आरोही (तना) Climbing 35
आर्थोट्रापस (डिम्ब) Orthotropous 124
आर्थोस्टिचीज़ Orthostichies 70
आवृतबीजी Dicotyledons 11
आश्रृतवर्ग Fungi 12

इ

इण्डोकार्प Endocarp 131
इण्डोस्पर्म Endosperm
" न्यूक्लियस Endosperm nucleus 127
इन्फीरियर (गर्भाशय) Inferior 89
इन्वालुकेर Involucre 80
इन्वालुसेल Involucel 82
इपीकार्प Epicarp 131
इपीकैलिक्स Epicalyx 91
इपीगाइनस (पुष्प) Epigynous 89
इपीजियल Epigeal 158
इपीपेटलस (पुष्प-लिंग) Epipetalous 99

उ

उत्पादक कोष्ठ Generative-cell 126
उद्भिदाकृतिक विभाग Morphology 8
उद्भेद Germination (पराग) 125, (बीज) 156

ऊ

ऊस्पोर Oospore 127

ए

एककोष्ठी Unicellular
" (गर्भाशय) Unilocular 103
एकदली Monocotyledons 11
एकपर्शुक Unicostate 59
एकपादी (तना) Monopodial 40
एकलिंगी (पुष्प) Unisexual 96
एकस्फोटी फल Follicle 135
एकान्तर (पत्ती) Alternate
" (पत्रक्रम) Spiral 69
" (शाखाक्रम) Uniparous 44

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

,, (पुष्प व्यूह) Uniparous 81

एकीन Achene 134

एकीनियल (फल) Achenial 134

एक्लेमीडियस (पुष्प) Achlamydeous 91

एक्स-एल्ब्यूमिनस (बीज) Ex-albuminous 156

एडल्फस Adelphous 99

एनाट्रापस (डिम्ब) Anatropous 125

एरिलस Arillus 141

एल्ब्यूमिनस (बीज) Albuminous 156

एल्यूरोन (तह) Aleurone layer 159

ए-सिमेट्रिकल (पुष्प) Asymmetrical 107

ऐ

ऐक्टिनोमार्फिक (पुष्प) Actinomorphic 106

ऐण्टीपोडल (कोष्ठ) Antipodal 124

ऐण्टीरियर Anterior 108

ऐण्ड्रोफोर Androphore 88

ऐंथोफोर Anthophore 88

औ

औत्पत्तिक सम्बन्ध Genetic relationship

क

कन्द Tuber 42

कपाट-स्फोटन Transverse dehiscence 132

करतलाकार (पत्ती) Palmate 61

कर्णासक्त (पत्ती) Auriculate 57

कलाजा Chalaza 123

कलिका Bud 31

काक्सी Cocci 137

काण्ड Stem

काण्डपत्र Cauline leaf 69

काण्डलग्न (पत्ती) Decurrent 57

कार्पोफोर Carpophore 89

कार्सेरुलस Carcerulus 137

काल्पनिक चित्र Theoretical diagram 108

कीटभोजी Insectivorous

कीटसिक्त (पुष्प) Entomophilous 117

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कीटाणु Bacteria

कीटाणु वर्ग Schizomycetes 12

कील (केरिना) Keel (Carina) 95

कुण्ठताग्र Obtuse 66

कैपिचुलम Capitulum 80

कैप्स्यूल Capsule 135

कैप्स्यूलर (फल) Capsular 135

कैम्पिलोट्रापस [डिम्ब] Campylotropous 125

कैरिओप्सिस Caryopsis 134

कोणयुक्त (तना) Angular 49

कोणीय [धरातल] Diagonal 108

कोषमय [पत्राधार] Sheathing 54

कंटकाकीर्ण Spiny

क्यूप्यूल Cupule 135

क्रमाच्छादित Twisted 95

क्रियाविज्ञान Physiology 8

क्रिनेट [धार] Crenate 67

क्रीमोकार्प Cremocarp 136

क्रूसीफार्म [दलचक्र] Cruciform 94

क्लिस्टोगैमस Cleistogamous 122

क्लेफ्ट Cleft 61

क्लैडोड Cladode 47

क्लोरोफिल Chlorophyll

ख

खनिज Mineral

खात Cavity

ग

गठन [पत्ती] Texture 67

गर्भ Embryo 128

गर्भ-कलिका Plumule 155

गर्भकोष Embryo—sac 123

गर्भाधान Fertilisation 127

गर्भाशय Ovary 101

गर्भावरण Perisperm 129

गर्भ-वृद्धि-शास्त्र Embryology

गाइनैंड्रस [पुष्पलिङ्ग] Gynandrous 99

गाइनोफोर Gynophore 88

गुल्म Bush 37

गैमोपेटलस [दलचक्र] 94

गौण Secondary

ग्रन्थि Node 17

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ग्राही (योनिछत्र) Receptive 120
ग्लाकस Glaucous 48
ग्लैब्रस (चिकना पृष्ठ) Glabrous
ग्लोबोस Globose 93

घ

घंटिकाकार Companulate 93

च

चक्रारोही (तना) Twining 35
चाक्रिक (पत्रक्रम) Verticillate 69
(पुष्प) Cyclic 91
चित्रित (पत्ता) Veriegated 68
चुक्रवर्ग Polygonaceae

छ

छत्र-विच्छेद Anther-lobe 97
छिद्रल (स्फोटन) Porous 98, 132

ज

जड़ (मूल) Root 17
जड़ रोम Root hair 24
जड़ विज्ञान Physical Science 2
जनककोष्ट Mother cell
जन्तु विज्ञान Zoology 2
जन्तुसिक्त (पुष्प) Zoophilous 117
जलसिक्त (पुष्प) Hydrophilous 116
जलीयजड़ Water root 28
ज़ाइगोमार्फिक Zygomorphic 107
जीवन-मूल Protoplasm 161

ट

टेट्राडाइनमस (लिंगचक्र) Tetradynamous 100

ड

डाइक्लेमिडियस Dichlamydeous 91
डाइडाइनमस Didynamous 100
डाइवर्जेन्स कोण Angle of Divergence 70
डायस्टेज Diastase 159
डार्सल स्यूचर Dorsal Suture 102
डार्सीफिक्स्ड (लिंगछत्र) Dorsifixed 97
डिम्ब Ovule 122
डिम्बनाल Funiculus 122

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

डिम्बावरण Integument 122
डिस्क Disc 90
डेकुसेट Decussate 69
डेन्टेट (धार) Dentate 67
ड्रूप Drupe 137

त

तनाव Tension
ताम्बूलाकार (पत्ती) Cordate 63
तीक्ष्णाग्र Acute apex 66
तुंदुल Saccate 93
तूलरोमश Tomentose 68

द

दन्तमय धार Toothed margin 66
दन्त-स्फोटन Dehiscence by teeth 132
दलचक्र Corolla 88
दलपत्र Petal 88
दुग्ध Latex
दुग्धिका जाति Euphorbia 83
दृढ़ कंटक Thorn 48
द्वि-ओष्ठी Bilabiate 93
द्वि-कोष्ठी (गर्भाशय) Bilocular 103
द्विदली Dicotyledons 11
द्वि-पत्ताकार (पत्ती) Bi-pinnate 62
द्वि-पृष्ठी (पत्ती) Bifacial 17
द्वि-पत्रक Binate 62
द्वि-लिंगी (पुष्प) Hermaphrodite 96
द्वि-वार्षिक Bi-ennial 27
द्विविभक्त Dichotomous

ध

धड़ (पेड़ी) Trunk 37
धारीय (बीजक्रम) Marginal 104

न

नग्नबीजी Gymnosperm 11
नट Nut 134
नतपृष्ठ Depression
नताग्र Emarginate apex 66
नपुंसक (पुष्प) Neutre 97
नरपुष्प Male or staminate flower 96
नरकोष्ठ Male cell 126
नलिका (नली) Tube, Vessel
नलिकाकार Tubular 93
नाड़ीक्रम Venation 59
नारीपुष्प Female or pistillate flower 96

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नारीकोष्ठ Female or egg cell 123
नाल Stalk
नाल चिन्ह Hilum 123
नाललग्न Petiolar 56
निगूढ़ विज्ञान Abstract science 2
निमाटोफोर Nematopbore 29
नियमित (पुष्प) Regular 91
„ जड़ संस्थान Tap-root System 25
नियमित प्रधान जड़ Tap root 25
निशास्ता Starch
न्यूक्लियस Nucleus
न्यूसेलस Nucellus 123

प

परजीवी जड़ Parasitic root 29
परसेचन Cross-pollination 113
परागकण Pollen grain 97
पराग-कोष Pollen Sac 97
पराग-नलिका Pollen tube 126
पराग पिण्ड Pollinium 100
परिकाण्ड (पत्ती) Perfoliate 57
परिकाण्ड पुंखपत्र Ochreate 56
परिमित (पुष्पव्यूह) Cymose 78
„ (शाखाक्रम) „ 44
„ बहुविभक्त Polychasium
परिवर्तीपत्र Tunic 41
परिसवर्ण Parianth 90
पर्व Internode 17
पर्योलिव Pericarp 131
पल्वाइनस Pulvinus 54
पश्चात्पाती Deciduous 92
पक्षाकार (पत्ती) Pinnate 61
पत्रक Leaflet 61
पत्रक्रम Phyllotaxis 68
पत्रनाल Petiole 54
पत्रमयकन्द Bulb 41
पत्राधार Leaf-base 54
पाइरीन Pyrene 138
पादासक्त जड़ Brace-root 28
पामेटीपार्टाइट Palmatipartite 61
पामेटी-फिड Palmati-fid 61
पामेटी-सेक्ट Palmati-sect 61
पार्टिशन Partition 61

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पार्श्वमुखी (स्फोटन) Lateral 98
पार्श्वीय (शाखाक्रम) Lateral 43
पार्श्वीय धरातल Lateral plane 108
पाली ऐंड्रूस (लिंगचक्र) Poly-androus 99
पालीपेटलस (दलचक्र) Polypetalous 94
पालीसेपलस (पुटचक्र) Polysepalous 91
पिण्ड-नाल Caudicle 100
पिण्ड-शरीरी Thallophyta 12
पिनेटीपार्टाइट Pinnati-partite 61
पिनेटी-फिड Pinnati-fid 61
पिनेटी-सेक्ट Pinnati-sect 61
पुट चक्र Calyx 88
पुट-नलिका Calyx-tube 89
पुट-पत्र Sepal 88
पुनर्गर्भाधान Double Fertili-sation 127
पुंखकोष ochrea 56
पुंख-पत्र Stipule 55
पुंखाकार Sagittate 64
पुष्पदण्ड Rachis 77
पुष्प दण्डिका Peduncle 76
पुष्प ध्वज Scape 77
पुष्प-नाल Pedicel 77
पुष्प-पत्र Floral leaf 53
पुष्पयोनि Gynaecium 88
पुष्पलिंग Stamen 88
पुष्प-व्यूही Inflorescence 76
पुष्पव्यूही फल Composite fruit 133
पुष्प-सूत्र Floral Formula 109
पूर्ण (पुष्प) Complete 96
पूर्णतनासक्त Amplexicaul 57
पूर्वपाती Caducous 92
पेचदार Spiral 91
पेटलायड Petaloid 91
पेपो Pepo 139
पेराइटल Parietal 104
पेरिगाइनस Peri-gynous 89
पेरियंथ Parianth 90
पेलिया Palea 82
पैपिलि ओनेशस Papili-onaceous 94
पोम Pome 139
पोषण Nutrition
पोस्टीरिअर 94
प्रयोग Experiment
प्रसार Dispersal
प्रांकुर Shoot 17
प्राणी विज्ञान Biology 2

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रामाणिक पत्ती Foliage leaf 53
प्रारम्भिक जड़ Radicle 155
प्रारम्भिक वृद्धिशील तंतु Primary meristem 188
पृष्ठज Ligule 58
प्लेसेंटा Placenta 104

फ

फणाकार Hooded 93
फनेलाकार Infundibuliform 93
फलक Blade or Lamina 54
फाइलोक्लेड Phylloclade 47
फाइलोड Phyllode 75
फ्लोरल डायग्राम Floral diagram 107
" फार्मूला Floral Formula 109

ब

बहु-कोष्ठी (गर्भाशय) Multilocular 103
बहुपर्शुक Multicostate 59
बहुपक्षाकार Decompound 62
बहुपादी Sympodial 40
बहुपादी अक्ष Sympodium 45
बहुवार्षिक Perennial 27
बिदण्डक Spike 79
बिदण्डका Spikelet
बिछत्र लिंग Staminode 98
बिभक्ताक्षीय Axile 104
बीजक्रम Placentation 104
बीजवाहक Spermaphyta 11
बीजहीन Cryptogams 11
बीजावरण Testa 128
बीजोद्भेद Seed-germination 156
बेरी Berry 138
बेलनाकार Cylindrical 49
बेसीफिक्सड Basifixed 97
ब्रायोफाइटा Bryophyta 12
ब्लूम Bloom 196

भ

भालाकार (पत्ती) Lanceolate 65
भोज्य पदार्थ Food material
भौमिक Underground
भ्रूणकलिका Plumule 155
भ्रूणवनस्पति Embryo plant

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

म

मध्यपर्शुक Mid-rib 59
मधुगंड Nectary 90
मल्टीकार्पेलरी 102
मलत्याग Excretion
मांसल Fleshy
,, चिदण्डिक Spadix 79
मांसाहारी Insectivorous
मार्जिनल अथवा धारीय 104
मिथ्या द्विविभक्त
False dichotomy 46, 81
मिथ्या व्यवधान False septum
103
मिश्रित (कलिका) Mixed 35
,, (पुष्पव्यूह) ,, 82
मीज़ोकार्प Mesocarp 131
मूलकन्द Root-tuber 43
मूलकाकार (जड़) Fusiform
27
मूलीय (पत्ती) Radical 69
मेरिकार्प Mericarp 136
मृदु Herbaceous
मृदुकंटक Spine 48
मृदुकंटकाकीर्ण Spiny 68
मृदुरोमश Pubescent 68

य

युग्मस्फोटी Legume 135
यूनीसेक्स्वलिटी 120
योनिचक्र Gynaecium 101
योनिसूत्र Style 101
योनिछत्र Stigma 101

र

रचना Structure
रजोपूर्व Protogynous 121
रजोपेटी Ovule 122
रन्ध्र Stomata
रनर Runner 36
रसदार अथवा मांसल (फल)
Succulent 134
रहन-सहन Habit
राइज़ॉयड 30
राइज़ोम 39
रिट्रोसिरेट 67
रूपान्तर Modification
रेखाकार Linear
रेग्मा 137
रेफ 125
रोमगुच्छ Coma 141
रोमश Hairy

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रोमशकुंठिताग्र Emarginate 66
,, पुच्छ pappus 92

ल

लट्वाकार (पत्री) Ovate 63
लम्ब (स्फोटन) Longitudinal 98
लम्बाग्र Acuminate 66
लम्बित Catkin 79
लवण Salt
लहरी Wavy 67
लाइरेट Lyrate 65
लाक्षणिक Characteristic
लिग्यूल 94
लिंगचक्र Androecium 96
,, सूत्र Filament 96
,, छत्र Anther 96
लैंगिक (सतानोत्पत्ति) Sexual 112
लोमेन्टम 136

व

वज्रकन्द Corm 40
वनस्पतिशास्त्र Botany
वर्ग Natural order
वर्टीसिलास्टर 83
वर्तुल (शाखाक्रम) Multiparous 44
वर्तुल शाखा-संस्थान Polychasium 46
वसेंटाइल 97
वल्कपत्र Scale leaf
वहन Conduction
वहिर्जात Exogenous
वहिरुद्भेद Outgrowth
वानस्पातक कोष्ठ Vegetative Cell 126
,, संतानोत्पत्ति Vegetative Reproduction 111
वायव्य विनिमय Gaseous exchange
वायुसिक्त(पुष्प) Anemophilous 115
वार्षिक Annual
वास्तविक (फल) True 130
,, (चित्र) Empirical 108
वाह्य External
वाह्याकृतिक विभाग External Morphology 8

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विगूस 95
विच्छेद Lobe, section
विछत्रलिंग Staminode 98
विनाल (पत्ती) Sessile 54
,, (पुष्प) Sessile 88
विपरीत (पत्रक्रम) Opposite 69
,, (शाखाक्रम) Biparous 44
,, शाखा-संस्थान Dichasium 40
विश्रामकाल (बीज) Resting period 153
विषमाकार (पत्ती) Oblique 64
विषमसंख्यक पत्ताकार Imparipinnate 62
विसर्पी (तना) Creeping 35
विज्ञान Science 1
व्यवहारिक Applied
व्यस्त-ताम्बूलाकार (पत्ती) Ob-Cordate 64
व्यस्त-लट्टूवाकार (पत्ती) Ob-Ovate 64
वृक्काकार (पत्ती) Reniform 64
वृत्ताकार (पत्ती) Rounded 64
वृद्धिशील Growing
वृन्तपत्र Bract 77
वृन्तपत्रक Bracteole 77
वृक्ष Tree 37
वृत्तप्रसरिणी (जड़) Epiphytic 28

श

शंकाकार Conical
शर्करा Sugar
शाक Herb 37
शाखाक्रम Branching
शिशुवनस्पति Seedling
शुक्रपूर्व Protandrous 119
शुष्क (फल) Dry 134
शैवाल वर्ग Algae 12
शोषण Absorption
श्रमविभाग Division of Labour

स

सकर Sucker 36
सचूड़ Umbel 80
संचयतंतु Storage tissue

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संचित Stored
सदरिडक Raceme 78
सनाल (पत्ती) Petiolate 54
„ (पुष्प) Pedicellate 88
सन्तानोत्पत्ति Reproduction
संधिस्थान Chalaza 123
संयुक्त (पत्ती) Compound 61
„ (पुष्पव्यूह) Compound 181
„ (विदरिडक) Compound 82
„ (सदरिडक) Panicle 82
„ (समारा) Compound 137
संयुक्तपादी Sympodial 45
संयुक्तयोनि Syncarpous 102
संयुक्तोत्पत्ति Adnation 46
संयोजक Connective 97
संलग्न Valvate 95
संश्लेष Adhesion 99
संसक्ति Cohesion 99
समशिख Corymb 79
समसंख्यक पत्ताकार Paripinnate 62
समानान्तर (नाड़ीक्रम) Parallel 59
समारा 134
सलजमाकार (जड़) Napiform 27
सहायक कोष्ठ Help cell 123
साइकोनस 141
साइजोकार्पिक 134
साधारण (पत्ती) Simple 60
„ (फल) „ 133
सामूहिक फल Aggregate 133
सायथियम 83
सिंजिनीसस 99
सिप्सेला Cypsela 134
सिरेट 67
सिलिकुला Silicula 135
सिलिका 135
सुबुलेट 65
सुपरपोज़्ड 69
सुपरफिशल 105
सुपीरिअर (गर्भाशय) 89
सुषुप्ति Dormancy
सूच्याकार Acicular 65
सूडोकार्प 130

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सूक्ष्मछिद्र Micropyle 123

सूक्ष्मदर्शक यंत्र Microscope

सूत्र Tendril, fibre

सूत्रवत् Fibrous

सूत्रभिन्नता Heterostyly 121

सेकण्डरीन्यूक्लियस 123

सेचनक्रिया Pollination 113

सेप्टीफ्रेगल 133

सेप्टीसाइडल 133

सेपलायड (दलपत्र) 94

सेल्फस्टेरिलिटी 120

सेंसरमेकनिज्म 148

सैकेट 93

सोरोसिस 140

सौत्रिक Fibrous

स्कारप्वायड 45

स्कूटेलम 159

स्टैंडर्ड 95

स्टोलन 36

स्ट्रोबिलस 141

स्तम्भक Thalamus 88

" Receptacle 77

स्थलीय (जड़) Terraneous 27

स्थायी Persistent

स्थितिस्थापक Elastic

स्थूलान्तराकृतिक विभाग Anatomy 8

स्पर्ड 92

स्पेथ 79

स्पैथुलेट (पत्ती) 64

स्पोर 112

स्फटिक Crystal

स्फुटविज्ञान Concrete Science 2

स्फोटन Dehiscence 97

स्वतंत्र कलिका Bulbil 34

स्वतंत्र (पुँखपत्र) Free 56

स्वतंत्रयोनि Apocarpous 102

स्वतंत्राक्षीय (बीजक्रम) Free-central 105

स्वावलम्बी (तना) Erect

ह

हस्क 131

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हाइपोकाटिल Hypocotyl 158
हाइपोगाइनस (पुष्प) 89
हाइपोजियल 157
हेलीक्वायड 45
हेस्पेरिडियम 139
हैस्टेट (पत्ती) 64

क्ष

क्षताग्र Truncate 66
क्षुप Shrub 37

त्र

त्रिकोष्ठी (गर्भाशय)
Trilocular 103
त्रिपक्षाकार Tri-piunate 62
त्रिपत्रक Trifoliate 62

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिशिष्ट

पारिभाषिक शब्दोंकी अनुक्रमणिका (द्वितीय भाग)

अ

अटूट बीज-प्रवाह Continuity of germ plasm 329

अतीसवर्ग Ranunculaceae 226

अहिफेनवर्ग Papaveraceae 228

अंतर्कोष्ठीय स्थान Inter-cellular space 187

अंतःचर्म Cortex

अनिश्चिताकार Amorphous

अनोरोबिक Anaerobic 292

अनुकूलन Adaptation

अनुपयोगी (पदार्थ) Excretions 175

अनुप्रस्थ विच्छेद Transverse section

अपराजितादि उपवर्ग Papilionatae 235

अप्रधान (विशेषता) Recessive 339

अभेद्य Impermeable

अम्लिकादि उपवर्ग Caesal-pinioideae 235

अर्द्धभेद्य Semi-permeable 260

अवक्षता Repulsion 342

अवशेषांग Vestigial organs

अवक्षेप Precipitate

आ

आकस्मिक परिवर्तन Mutation 337

आक्ज़ानोमीटर Auxano-meter 305

आक्सीकरण Oxidation

आम्लिक Acidic

आर्कीक्लैमिडी Archichla-mydeae 225

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आर्द्रताजन्य अवयव-गति Hydro-tropic Movement 312
आस्मोटिक प्रेशर Osmotic pressure 260
आस्मोसिस 259

इ

इक्सोडर्मिस Exodermis 208
इटिओलेटेड Etiolated 281
इड Id 344
इण्टरकैलरी Intercalary 188
इण्टामालीक्यूलर Intra-molecular 292
इण्ट्रास्टेलर (तंतु) Intra-stelar 194
इण्डोडर्मिस Endodermis 195
इन्फीरियर पेलिया Inferior palea 253
इपीफाइट Epiphyte 241
इपीब्लेमा Epiblema 208
इरोबिक (श्वसन) Aerobic

उ

उड-पैरेनकाइमा Wood-parenchyma 195
उत्तेजना Stimulus 307
उत्तेजना-ग्राहक भाग Perceptive region 314
उत्तेजितत्व Irritability 170
उत्थानात्मक द्रव्यान्तर Anabolism 274
उन्नतविन्दु Bordered pit 166
उपकरण Factor
उपजाति Species 223

ए

एककोष्ठी (तंतु) Coeno-cyte 185
एकदला Monocotyledon 250
एरण्ड वर्ग Euphorbiaceae 239
एल्यूरोन (करण) Aleurone grain 178

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऐ

ऐब्सिस लेअर Absciss layer 219

क

कटुका वर्ग Scrophulariaceae 244

कलेक्टिंगकोष्ठ Collecting cell 215

कामन बंडिल Common bundle 198

कार्कतंतु Cork tissue 202

कार्कोत्पादक तह Phellogen 202

कार्पासवर्ग malvaceae 231

कार्बन-एसिमिलेशन 275

कालाइन बंडिल Cauline bundle 198

काष्ठ पैरेनकाइमा Wood Parenchyma 195

काष्ठसार Heart wood (Duramen) 201

काष्ठ सूत्र Wood fibre 195

कीमोट्रापिज्म Chemotropism 313

कीमोसिन्थेसिस Chemo-synthesis 283

केरिओकाइनेटिक Karyo-kinetic 183

कैपिलरी जल Capillary water 259

कैम्बियम Cambium 195

कैरोटिन (पीतवर्णमूल) Carotin 174

कैलस Callus 191, 206

कोणीय-स्फटिक समुदाय Sphaeraphide 177

कोन Cone 141

कोलेनकाइमा Collenchyma 189

कोष्ठ Cell 161

कोष्ठ-जीवनमूल Cytoplasm 167

कोष्ठ-पट्ट Cell plate 182

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोष्ठ-रस Cell-sap 171
कोष्ठरसारोह Ascent of sap 271
कोष्ठावरण Cell-wall 161
कंटकारी वर्ग Solanaceae 243
क्यूटीन Cutin 162
क्यूटीन-पट्ट Cuticle 196
क्यूटीनयुक्त तंतु Cutinised tissue 190
क्रिया-विज्ञान Physiology 255
क्रोमेटीन Chromatin 172
क्रोमोज़ोम Chromosome 181
क्रोमोप्लास्ट Chromoplast 174
क्लिनोस्टैट Klinostat 310
क्लोरोफाइलेज Chlorophyllase 281
क्लोरोफिल Chlorophyll 174

ख

खाद्यानुपयोगी (पदार्थ) Secretions 175
खाद्योपयोगी (पदार्थ) Plastic 175

ग

गटेशन Guttation 266
गर्जरादि वर्ग Umbelliferae 237
गुम्बज़ Dome
गोधूम वर्ग Gramineae 251
गौड़ अंतःचर्म Phelloderm 202
गौड़ नासिकाछिद्र Lenticel 203
गौड़ वृद्धिशील-तंतु Secondary meristem 188
गौड़ वृद्धि Secondary growth
गंड-तंतु Glandular tissue 192
गंड-वल्क „ scale
ग्रन्थि Tubercle 284
ग्रैंड पीरिअड आफ़ ग्रोथ Grand period of growth 305

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घ

घोल Solution

च

चक्रगति Rotation 170
चक्राकार (वृद्धि) Annular 165

ज

जम्बीर वर्ग Rutaceae 233
जल-गंड Water glands 217
जल-छिद्र Water stomata 216
जल-त्याग Transpiration 266
,, मापक यंत्र Potometer 269
जलधारा Transpiration Current 271
जलाकर्षक Osmotic
जाति Genus 223
ज़ाइमेज़ Zymase 296
ज़ाइलम Xylem
जीन Gene 344
जीवन-मूल Protoplasm 161
जीवित कोष्ठांग Protoplast 161
जैन्थोफिल Zanthophyll 174
जोड़ा (विशेषताओं का) Allelomorph 339

ट

टर्गर का दबाव Turgor pressure 260
,, ,, तनाव Turgor Tension
टाइलोसिस Tyloses 201
टोरस Torus 166

ड

डिटर्मिनर Determiner 344

त

तहवार वृद्धि Stratified growth 165

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तारकाकार (रश्म्याकार) Stellate 164
तुलसी वर्ग Labiatae 246
तंतु Tissue 186
तंतु संस्थान Tissue-system 186

द

दुग्धवाहक तंतु Laticiferous tissue 192
दृढ़कारी तंतु (पौष्टिक) Strengthening tissue
द्वि-दली Dicotyledon 225
द्वि-पार्श्वक्रमी Bi-collateral 198

ध

धारीय जीवनमूल Ectoplasm 171

न

नस्ल Variety 223
नत्रजन Nitrogen
नत्रजनीय Nitrogenous
नाइट्रोजन-एसिमिलेशन Nitrogen assimilation 283
नासिका छिद्र Stomata 214
निद्रा-गति Nictinastic movement 312
न्यूक्लिओलस Nucleolus 181
न्यूक्लियर डिस्क Nuclear disc 183
" स्पिंडिल Nuclear spindle 183
न्यूक्लियस Nucleus 172

प

पतनात्मक द्रव्यान्तर Katabolism 275
पर्पटवर्ग Fumariaceae 229
परजीवी (प्राणी) Parasite 282
परम्परा-प्राप्ति Heredity 337

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परान्नभोजी (प्राणी) Parasite 282
परिचक्र Pericycle 197
परिवर्त्तन Variation
पलाण्डुवर्ग Liliaceae 250
पार्श्वक्रमी Collateral 198
पाषाण-कोष्ठ Stone cell 166
पेरिब्लेम Periblem 194
पैरेनकाइमेटस (कोष्ठ) Parenchymatous 164
पैरेनकाइमा Parenchyma 188
पैलिसेड तंतु Palisade tissue 215
प्रकाशजन्य अवयवगति Phototropic movement 310
प्रतिक्रिया Reaction
प्रतिक्रिया-शील भाग Motor region 314
प्रत्यावर्त्तन Reversion 342
प्रधान (विशेषता) Dominant 339
प्रवर्त्तक Enzyme
प्राकृतिक चुनाव Natural selection 330
प्रारम्भिक वृद्धिशील तंतु Primary meritem 188
पृथक्करण Segregation 339
प्रेरित अवयव-गति Tropic movement 308
प्रेरितगति Induced movement 306
प्रोटीन स्फटिकांश Protien crystalliod 178
,, गोलांश Protien globoid 178
प्रोसेनकाइमेटस (कोष्ठ) Prosenchymatous 164
प्रोसेनकाइमा Prosenchyma 189
प्लीरोम Plerome 194

फ

फर्मेंटेशन Fermentation 295

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फेलोजन Phellogen 202

ब

बब्बूलादि उपवर्ग Mimoseae
बसा Fat
बहु-कोष्ठी Multicellular

भ

भूस्याकर्षण Gravity
भूस्याकर्षण-जन्य अवयव-गति Geotropic movement 308
भौगोलिक वितरण Geographical Distribution 323

म

मध्य पट्ट Middle lamella 183
मंजिष्ठादि वर्ग Rubiaceae 241
माइकोराइज़ा Mycorhiza 283
मूलतंतु Ground tissue 193
मूलवीज Germ-plasm 325
मेडुलरी रे Medullary Ray 195
मेंडेलिज्म Mendelism 337
मोरवेल जाति Clematis 226
म्यूसिलेज 162
मृतजीवी Saprophyte 282
मृदुकाष्ठ Sap-wood अथवा Alburnum 201

र

रंजक पदार्थ Pigment
रश्म्याकार Stellate 164
रसवाहक तंतु-संस्थान Vascular System 193
रसवाहक कोष्ठ समूह Vascular bundle 194
रसवाहक नलिका Vessel अथवा Tube
रसस्राव Bleeding 268
रसारोहण तंतु Tracheal tissue 190

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रसारोहण नलिका Tracheae 190
„ कोष्ठ Trachied 190
रसावरोहण तंतु Sieve-tube-tissue 191
„ नलिका Sieve tube
रक्षककोष्ठ Guard cell 214
रक्षण तंतु-संस्थान Epidermal System 193
रूटप्रेशर 265
रेप्लम Replum 230
रेस्पिरेटरी कोशेंट 290

ल

लघ्वीकरण विधि (संतानोत्पत्ति) Reduction Division 183
लाइसीजेनस 187
लाडीक्यूल 253
लिग्निन 162
लिनिन 172
लुप्तकड़ी Missing link 322
लुप्तप्राणी शास्त्र Palæontology
ल्यूकोप्लास्ट 173

व

वक्रगति Circulation 170
वर्गीकरण Classification 220
वर्णजनक Chromatophore 167
वर्णधारक Plastid
वर्णमूल Pigment 174
वर्णसंकर Hybrid
वाटरकल्चर के प्रयोग
„ (Experiment) 257
वार्षिकचक्र Annual Ring 200
वाह्यचर्म Epidermis 194
वाह्यचर्म-जनक Dermatogen 194
वाष्पीभवन Evaporation

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विकासवाद Theory of Evolution 317
विन्दुमय Pitted 165
विश्लेषण Analysis
विशिष्टोत्पत्तिवाद Theory of Especial creation 317
विशेषता Character 341
वीजप्रवाह Continuity of Germ-plasm 329
व्यापन Diffusion
वृद्धि Growth 300
वृद्धिशील (तंतु) Meristematic 187
„ (वंडिल) Open 198

श

शतपत्रीवर्ग Compositae 247
शिम्बीवर्ग Leguminosae 234
शूक Awn
शोषण दबाव Suction pressure 263
श्वसन क्रिया Respiration

स

संक्रमण Inheritance 333
संतुलन Balance
संयुक्तकण (स्टार्च) Compound Grain 180
संयुक्त (वंडल) Conjoint 198
संयोगविधि (संतानोत्पत्ति) Conjugation 185
संवहन Transmission
संवद्धता Linkage 342
संसक्ति का सिद्धान्त Cohesion Theory 272
संस्थान System 193
समपृष्ठी Iso-bilateral 217
सर्षपवर्ग Cruciferae 230
सहकारी कोष्ठ Companion cell 192
साइज़ोजेनस 187

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सिक्रीशन 266
सिस्पेटली 240
सिस्टोलिथ 163
सीमास्थापक उपकरण Limiting factor 278
सीव नलिका Sieve tube 191
सीव-पट्ट Sieve plate
सुबेरीन 162
सुबेरीनयुक्त तंतु Suberized tissue 190
सुपीरियर पेलिया 253
सूच्याकार स्फटिक-समुदाय Raphide 177
सेंट्रोस्फीयर 172
सेलुलोज़ 162
स्केलरीफार्म 165
स्क्लेरेनकाइमा 189
स्थानान्तर Translocation
स्थायी (तंतु) Permanent 188
स्पंजी (तंतु) 215
स्पर्शजन्य अवयवगति Haptotropism
स्फटिकाकार Crystalline
स्फुरणविधि (संतानोत्पत्ति) Rejuvescence 185
स्वेच्छा (गति) Spontaneous 306

ह

हरितवर्ण वाहक Chloroplast 173
हाइड्रोजन-ग्राहक Hydrogen-acceptor 294
हेटेरोज़ाइगस 341
होमोज़ाइगस 341

क्ष

क्षारिक Alkaline

त्र

त्रिपार्श्वाकार Prismatic

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रारम्भिक वनस्पति-शास्त्र

प्रस्तावना

विज्ञान—यह भौतिक संसार सजीव और निर्जीव दो प्रकार के पदार्थों से बना है। इनमें अधिक संख्या बहुत ही असाधारण संगठन के पदार्थों की है, परन्तु शेष दूसरे पदार्थों में जातीय [illegible] रूपक जटिलता इतनी अधिक है कि वे एक रूप [illegible] और स्वतन्त्र [illegible] प्रारम्भ [illegible] परन्तु ज्यों-ज्यों [illegible] त्यों-त्यों उन्हें भिन्न-भिन्न पदार्थों के रूप, [illegible] व्यवहार आदि में समानतायें प्रकट होने लगीं। इसका यह परिणाम हुआ कि अब वे सांसारिक पदार्थों का धीरे-धीरे वर्गीकरण करने लगे। उनकी समानताओं और विभिन्नताओं का निरीक्षण करके उनको भिन्न-भिन्न वर्गों, उपवर्गों, जातियों तथा उपजातियों में विभक्त करने का प्रयत्न करने लगे। इस प्रयास में प्राकृतिक नियमों की व्यापकता भी धीरे-धीरे प्रमाणित होने लगी। इस परिवर्त्तित अध्ययन-विधि से प्राप्त किया हुआ पदार्थ-ज्ञान क्रमबद्ध और श्रेणीबद्ध होने के कारण 'विज्ञान' के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ज्यों-ज्यों सांसारिक पदार्थों का परिचय बढ़ता गया और ज्यों-ज्यों उनके द्रव्य, आकार, रचना तथा उनमें होनेवाले परिवर्तनों की जानकारी बढ़ती गयी, त्यों-त्यों विज्ञान की भिन्न-शाखाओं का आविर्भाव होता गया। जिन-जिन विज्ञानों ने द्रव्य (Matter) को अपना विषय बनाया, वे स्फुट-विज्ञान (Concrete Sciences) और गणित, दर्शन आदि विज्ञान जिनका केवल विचार, भावना आदि से सम्बन्ध था, वे निगूढ़-विज्ञान (Abstract) के नाम से प्रसिद्ध हुए। स्फुट विज्ञानों में फिर दो श्रेणियां की गयीं। एक श्रेणी में केवल जड़ पदार्थ अध्ययन के विषय बनाये गये, इसलिये उसे जड़-विज्ञान (Physical Science) का नाम दिया गया। इसके अन्तर्गत रसायन-शास्त्र, भौतिक-शास्त्र, भूगर्भ-शास्त्र, यन्त्र-विद्या तथा ज्योतिष आदि भिन्न-भिन्न विज्ञान सम्मिलित हैं। दूसरी श्रेणी में जीवित पदार्थों से सम्बन्ध रखने वाले प्राणी-विज्ञान (Biological Sciences) सम्मिलित किये गये हैं। इसके अन्तर्गत वनस्पतिओं तथा जन्तुओं से सम्बन्ध रखने वाले क्रमशः वनस्पति-शास्त्र तथा जन्तु-शास्त्र हैं।

सजीव और निर्जीव पदार्थों में भेद—इन दोनों प्रकार के पदार्थों की विभिन्नता केवल उस पदार्थ के कारण है जो केवल सजीवों में ही पाया जाता है। जीवन का एकमात्र आधार होने से यह जीवन मूल (Protoplasm) कहा जाता है। जीवन-युक्त पदार्थों की विशेषतायें इसी पर निर्भर हैं। यह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पदार्थ आत्म-रचयिता तथा आत्म-संचालक कहा जाता है, क्योंकि शोषण द्वारा यह बाहरी पदार्थों को अपने अन्दर लेकर अपना ही निर्माण करता रहता है, अतः सजीव पदार्थों की वृद्धि भीतर से होती रहती है। स्फटिक जैसे निर्जीव पदार्थों की भी वृद्धि होती है, पर वह भीतर से न होकर बाहर से होती है। जीवनमूल बाहर से आये हुए तथा अपने ही बनाए हुए पदार्थों को तोड़कर जो शक्ति प्राप्त करता है, उसीसे यह अपनी सारी क्रियायें करता है, अतः यह आत्म-संचालक कहा जाता है। जीवन-मूल एवं सजीव पदार्थों की विशेषताओं में एक सन्तानोत्पादन भी है जिससे वे अपने समान कई सजीव पदार्थों को उत्पन्न कर सकते हैं। जीवन मूल में गति करने की तथा ताप और प्रकाश आदि बाह्य-उत्तेजनाओं (External Stimuli) से उत्तेजित हो उठने तथा उनके प्रतिकार करने की भी शक्ति होती है जिससे निर्जीव सर्वथा वञ्चित रहते हैं।

जन्तु तथा वनस्पति—यद्यपि जन्तुओं और वनस्पतिओं के लिये भिन्न भिन्न विज्ञान हैं, तथापि इन दोनों प्रकार के पदार्थों के रूप, आकृति, तथा जीवन की मुख्य-मुख्य घटनाओं में इतना सादृश्य होता है कि कभी २ उनको एक दूसरे से अलग करना कठिन हो जाता है, तब भी, आगे लिखे लक्षणों के आधार पर उनको अलग-अलग श्रेणी में विभक्त करने का प्रयत्न किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वनस्पति

(१) थोड़े से क्षुद्र जल में होने वाले पौधों के अतिरिक्त सभी पौधे स्थानान्तर कराने वाली गति-शक्ति से वंचित रहते हैं।

(२) वनस्पति कोष्ठ (Cell) दृढ़ आवरण से युक्त होता है।

(३) पौधे अपने लिये खाद्य पदार्थ प्रायः स्वयं बना लेते हैं। इसके लिये वे पृथ्वीसे सामान्य खनिज पदार्थ तथा वायु से Co_2. (कार्वन डाइ आक्साइड गैस) लेते हैं। अन्यथा वे स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करने की क्षमता रखते हैं।

(४) वनस्पतिओं में लम्बाई की वृद्धि केवल तनों और जड़ों के अग्रभागों पर होती है, और उनके जीवन काल के अन्त तक होती रहती है।

जन्तु

(१) स्पञ्ज, सी एनीमोन आदि कुछ जन्तुओं को छोड़कर सभी जन्तु गति करके स्थान बदलते रहते हैं।

(२) ऐसे आवरण जन्तु कोष्ठों में नहीं होते।

(३) जन्तु इन साधारण पदार्थों से अपने लिये भोज्य पदार्थ नहीं बना सकते। इसके लिये उन्हें अन्य जन्तुओं तथा वनस्पतियों पर निर्भर रहना पड़ता है। वनस्पति-विहीन संसार में इनका निर्वाह नहीं हो सकता।

(४) जन्तुओं में ऐसी वृद्धि सर्व प्रान्तिक वृद्धि से होती है और उनको स्वाभाविक मृत्यु के बहुत पहले बन्द हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इन लक्षणों की सहायता लेने पर भी, कुछ अति क्षुद्र सजीव पदार्थों को वनस्पति अथवा जन्तु बतलाना बहुत कठिन हो जाता है, क्योंकि उनमें उपर्युक्त विभेदक लक्षणों का पूर्ण विकास नहीं हुआ रहता। इसलिये उन्हें एक ओर वनस्पति विज्ञान वाले अपनाते हैं, और दूसरी ओर जन्तु-शास्त्र वाले जन्तु बतलाते हैं। विकासवाद (Theory of Evolution) के अनुसार ऐसे जीवों का स्थान विकास-क्रम में सबसे नीचा माना गया है। इस सिद्धान्त के अनुसार समस्त सजीव पदार्थों का विकास इन्हीं अथवा इनके सदृश ही अन्य प्राणियों से हुआ होगा, जो सर्व प्रथम उत्पन्न हुए थे। परिस्थिति के अनुसार उनकी सन्तानों में क्रमशः परिवर्तन आने लगे। वे परिवर्तन दो भिन्न-भिन्न दिशाओं में होते गये। एक दिशा में होने वाले परिवर्तनों से जन्तु-संसार की, और दूसरी दिशा में होने वाले परिवर्तनों से वनस्पति-संसार की सृष्टि हुई। जन्तुओं और वनस्पतिओं के संगठन तथा जीवन से सम्बन्ध रखनेवाली मुख्य-मुख्य घटनाओं में जो सादृश्य दिखायी पड़ता है, वह इसी उपर्युक्त वंशोत्पत्ति (पूर्वजोत्पत्ति) की एकता के कारण है।

'जन्तुओं तथा वनस्पतिओं में निम्नलिखित मुख्य-मुख्य समानतायें हैं:—

(१) दोनों का शरीर एक अथवा अनेक सूक्ष्म कोष्ठों का बना होता है, जो विभक्त होकर अपनी संख्या वृद्धि करते रहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(२) उनके जीवन की मुख्य घटनायें समान व्यापक नियमों के अनुकूल घटती हुई देखी जाती हैं। पोषण, सन्तानोत्पादन तथा वृद्धि सम्बन्धी सभी क्रियायें दोनों में प्रायः एक ही तरह की होती हैं। श्वसन, गति तथा उत्तेजितत्व की शक्ति प्रायः दोनों में एक ही तरह से काम करती हुई मालूम होती है।

(३) दोनों शरीर में रहनेवाला मूल पदार्थ जिसे जीवन-मूल कहते हैं एकही प्रकार का होता है।

वनस्पति-विज्ञान तथा इसकी उपयोगिता।

प्रत्येक विज्ञान के दो पक्ष होते हैं, शुद्ध और व्यवहारिक। शुद्ध विज्ञान का अध्ययन केवल विज्ञान के लिये किया जाता है। इसका उद्देश्य नयी घटनाओं तथा अज्ञात बातों की खोज करना है, चाहे मानव-जीवन में उनकी कुछ भी उपयोगिता न हो। इसके विपरीत, व्यवहारिक विज्ञान में केवल उन घटनाओं का तथा तत्सम्बन्धी उस वैज्ञानिक सत्य का समावेश होता है, जो मानव-जीवन को सुखमय बनाने में भाग लेते हैं। इसका एकमात्र अभिप्राय मनुष्य के सुखसाधनों को बढ़ाना और उनको उत्तरोत्तर पूर्ण बनाना होता है। परन्तु हमें यहां इस बात का स्मरण रखना चाहिये कि वर्तमान व्यवहारिक विज्ञानों की उन्नति वस्तुतः शुद्ध विज्ञानों की वृद्धि से ही हुई है। आजतक जितने भी चमत्कारपूर्ण युग-प्रवर्तक अन्वेषण कृषि, चिकित्सा, वैद्युत तथा यान्त्रिक विज्ञानों के क्षेत्र में हुए हैं, वे शुद्ध विज्ञान की ही सम्पत्ति हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वनस्पति विज्ञान का व्यवहारिक पक्ष प्राणीमात्र के लिए बहुत ही आवश्यक है। उनके खाद्य पदार्थ पौधों से ही आते हैं। वर्तमान सभ्यता के कितने आवश्यक उपकरण वनस्पति संसार से ही प्राप्त होते हैं। कोयला, कागज, कपड़ा, काष्ठ, नाना प्रकार के तैल, रबर, रेज़िन, चिकित्सोपयोगी काष्टौषधियां पौधों से ही प्राप्त होती हैं। इस पृथ्वी पर कितने ऐसे भाग हैं जहां समय-समय पर वानस्पतिक वृद्धि के प्रतिकूल अवस्थायें उपस्थित होती रहती हैं। वर्षाभाव, उद्भिद् रोग आदि के कारण वहां खाद्योपयोगी अन्नों की पैदावार नहीं होने पाती। कितनी ही जातियां अपना पेट भरकर भी अतृप्त रहती हैं, और अपने सुख साधनों के बढ़ाने की चेष्टा में अन्य जातियों के दुख का कारण बन जाती हैं। अकाल पीड़ितों का क्रन्दन, असन्तोषी सम्पन्न-जातियों की अधिकार-चेष्टा तथा बढ़ती हुई जन-संख्या की अनिवार्य मांग ने ऐसा घोर मानव-संघर्ष पैदा कर रखा है, जो दिन पर दिन बढ़ता ही जा रहा है। इन्हीं कारणों से बाध्य होकर वनस्पति-शास्त्र को व्यवहारोपयोगी बनाने का प्रयत्न किया गया, जिसका यह परिणाम हुआ है कि आज दिन कृषि-विज्ञान, उद्यान-विद्या, उद्भिद्रोग विज्ञान तथा कीटाणु विज्ञान का आविर्भाव तथा इतना विकास हो गया है।

वनस्पति शास्त्र के विभाग। जन्तुओं की तरह पौधों का भी अध्ययन भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से किया गया है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तदनुसार इस विज्ञान के कई विभाग किये गये हैं। (१) उद्भिद्वर्गीकरण (Classification) इसका यह लक्ष्य होता है, कि पौधों के अन्दर उस पारस्परिक सम्बन्ध का निश्चय किया जाय जिससे उनकी उत्पत्ति तथा विकास-क्रम का पता चले। इतना निश्चय हो जाने पर उनका वैसा ही सम्बन्ध-सूचक वैज्ञानिक नाम रखकर उसकी जाति, वर्ग तथा श्रेणी का पूर्ण रूप से निश्चय कर दिया जाय। (२) उद्भिदाकृतिक विभाग (Morphology) इसका सम्बन्ध पौधों के आकार तथा रचना से होता है। इसके अन्तर्गत कई छोटे विभाग हैं। वाह्याकृतिक-विभाग (External morphology) में केवल बाहरी आकार तथा अवयव-विन्यास का अध्ययन होता है, और अन्तराकृतिक विभाग में पौधों की आन्तरिक रचना पर ध्यान दिया जाता है। इससे पौधों के तंतु (Tissues), तंतु-विन्यास तथा कोष्ठों का ज्ञान होता है। तंतुज्ञान को पूर्ण बनाने के लिये पहले उनकी स्थूल रूप से परीक्षा की जाती है, और मुख्यतः उनके तंतुविन्यास का पता लगाया जाता है। इसके लिये स्थूलान्तराकृतिक विभाग (Anatomy) अलग सूक्ष्म दर्शक यन्त्र (Microscope) की सहायता से तंतुओं की सूक्ष्म रूप से परीक्षा करके कोष्ठों तक का हाल जानने के लिये आभ्यन्तराकृतिक विभाग (Histology) अलग है। (३) उद्भिद्क्रिया-विज्ञान के विभाग से पौधों की जीवन सम्बन्धी क्रियाओं का ज्ञान होता है। इससे यह जाना जाता है कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पौधे CO_2. खनिज लवण आदि अनिर्मित खाद्य-पदार्थ किस तरह प्राप्त करते हैं, उन्हें लेकर वे कैसे उच्च श्रेणी के भोज्य पदार्थों का निर्माण करते हैं। इन पदार्थों में फिर कैसे रासायनिक परिवर्तन होते हैं, और उनके विश्लेषण से पौधे शक्ति किस प्रकार प्राप्त करते हैं? इस प्रकार अपनी शारीरिक वृद्धि करते हुए वे किस प्रकार सन्तानोत्पत्ति करते हैं? क्रिया-विज्ञानवाले, पौधों की क्रियाओं को भौतिक तथा रासायनिक विज्ञानों के मूल नियमों के अनुकूल प्रमाणित करने का प्रयत्न करते हैं। उन लोगों ने पौधों के जीवन आधार तथा परिस्थिति (Environment) के बीच सामंजस्य स्थापित करने के लिये एक और स्वतंत्र विभाग कर रक्खा है, जिसे परिस्थिति विज्ञान (Ecology) कहते हैं। इसके द्वारा वे इस बात के जानने का प्रयत्न करते हैं कि जल, ताप, प्रकाश तथा मिट्टी आदि उपकरणों से परिस्थिति कितने भाग में सम्पन्न हो कि उसमें अमुक पौधा अपनी अमुक अथवा अभिवांछित वृद्धि कर सके।

वनस्पतिओं की व्यापकता तथा उनका वर्गीकरण

इस पृथ्वी पर वर्तमान समय में पौधों की भिन्न-भिन्न उपजातिओं (Spceies) की संख्या लगभग पौने दो लाख के है। इनके अतिरिक्त बहुत सी ऐसी उपजातियां भी हैं, जो प्राचीन काल में थी, पर अब उनका लोप हो गया है। उनमें अनेक ऐसी हैं, जो अब तक पृथ्वी के गर्भ में जीर्णावशेष अवस्था में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पड़ी हुई पायी जाती हैं, । यदि हम अपनी ही बस्ती के चारो ओर भिन्न-भिन्न प्रकार के पौधों की जांच करें तो उनके निवास स्थान (Habitat) जीवन, क्रम, कद तथा रचना आदि में बड़ी भिन्नता देखने में आयेगी । उनमें कुछ वट-वृक्ष की तरह बहुत विशाल, और कुछ जल की काई की तरह बहुत ही छोटे होंगे । कुछ धतूर की तरह पुष्पवाले और कुछ हंसराज की तरह बिना फूल के होंगे । कुछ उपजाऊ खेतों में, कुछ कंकरीली पथरीली ऊसर भूमि में तथा कुछ जलाशयों के समीप नम जमीन में उगे हुए पाये जायंगे । इसी प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी मण्डल पर शायद ही ऐसा कोई स्थान होगा, जहां किसी न किसी प्रकार की वनस्पति न पायी जाती होगी । मीठे तथा खारे जल खण्डों में, बर्फीली जमीन में, मिट्टी की ऊपरी तहों में (शैवाल, आश्रित तथा कीटाणु वर्ग की सूक्ष्म वनस्पतियां), वायु मंडल में (हलके बीज तथा फल पराग कण तथा अनेक प्रकार के कीटाणु) तथा दूसरे पौधों और जन्तुओं के ऊपर या अन्दर आश्रित रूप में भी अनेकों वनस्पतियां पायी जाती हैं । हिमालय जैसे पहाड़ों के उच्च शिखरों पर, दोनों ध्रुवों के पास, साइबेरिया के जांगल्य-प्रान्तों में, जहां तापक्रम -८० फ० तक आ जाता है, तथा गर्म सोतों में जिनमें बहुतों का तापक्रम १७० फ० तक होता है, बहुत सी वनस्पतियां पायी जाती हैं ।

वनस्पति विज्ञान का विद्यार्थी पौधों की विभिन्नताओं तथा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनके आधिक्य को देखकर प्रारम्भ में घबड़ा सा जाता है, परन्तु जब वह उनका तुलनात्मक अध्ययन करके किसी वैज्ञानिक आधार पर उनका वर्गीकरण प्रारम्भ करता है, और उनकी समानताओं तथा विभिन्नताओं का निरीक्षण करके उन्हें भिन्न-भिन्न वर्णों तथा जातिओं में विभक्त कर लेता है, तब उसे वनस्पतिओं का अध्ययन अधिक सुगम और रोचक प्रतीत होने लगता है।

'आकृतिक समानता तथा विकास-क्रम के आधार पर वनस्पति संसार निम्नलिखित मुख्य-मुख्य श्रेणियों में विभक्त किया गया है:—

(१) वीजवाहक (Spermaphyta) वीज तथा फूल फल वाले

(अ) नग्नवीजी (Gymnosperm) जिनके वीज नग्न होते हैं, जैसे देवदारु, सेडार आदि।

(ब) आवृतवीजी (Angiosperm) सामान्य पुष्पवाले पौधे जिनका वीज गर्भाशय के अन्दर बनता है।

(i) द्विदली (Dicotyledons) जिनके वीज में से वीजपत्र (Cotyledons) होते हैं, जैसे अरहर, एरंड।

(ii) एक दली (Monocotyledon) एक वीज पत्र वाले जैसे जौ, गेहूँ, केला, बांस, आदि।

(२) वीज हीन (Cryptogams) जिनमें वीज, फूल तथा फल नहीं होते (वंशानुगत स्वभाव से ही)।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(अ) अवीजोत्कृष्ट (Pteridophyta) विकसित नाड़ी तंतु युक्त पौधे, जिनमें हंसराज आदि फर्न नाम के पौधे हैं।

(ब) व्रायोफाइटा (Bryophyta) जिनमें पत्ती तथा तने का विकास है, पर जड़ों का नहीं जैसे दीवाल की काई।

(स) पिण्ड शरीरी (Thallophyta) सबसे क्षुद्र श्रेणी के पौधे जिनमें अंगों का विकास नहीं है, बल्कि उनका शरीर पिण्डवत् (Thalloid) है, जैसे जल-काई, छत्रक, शैवाल आदि।

(i) कीटाणुवर्ग (Schizomycete) रोग-वाहक कीटाणु।

(ii) शैवाल वर्ग (Algae) प्रायः क्षुद्र जलके पौधे

(iii) आश्रित वर्ग (Fungi) क्लोरोफिल से वंचित पौधे जिनमें पराश्रयी (Parasite) और मृताश्रयी (Saprophyte) दोनों हैं, जैसे छत्रक, राई की कज्जली।

वनस्पतिओं की रचनात्मक जटिलता तथा श्रम-विभाग—उपर्युक्त वर्गी-करण वनस्पतिओं की रचनात्मक जटिलता (Differentation of Structure) तथा श्रम विभाग (Division of labour) के आधार पर किया गया है, इसीलिये यह विकास क्रमानुसार और स्वाभाविक माना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जाता है। पिण्ड शरीर वनस्पतिओं के स्थान विकास क्रम में सबसे नीचा माना गया है—अर्थात् इसी श्रेणी की वनस्पतिओं से सम्पूर्ण वनस्पति संसार की क्रमशः उत्पत्ति हुई है। इसी लिये इनमें रचनात्मक जटिलता तथा आत्म विभाग वहुत निम्न कोटि का होता है। पत्ती, जड़ तथा तना आदि का विकास नहीं हुआ रहता। इनमें कितने तो एक ही कोष्ठ के होते हैं, और उनका सब कार्य उसी एक कोष्ठके द्वारा होता है। बहुतों में कोष्ठ समूह अथवा तंतु (Tissue) बने होते हैं, परन्तु भिन्न-भिन्न कार्यों के लिये भिन्न-भिन्न तंतु उनमें भी नहीं होते। तंतु उस कोष्ठ समूह को कहते हैं, जिसके सब कोष्ठ न्यूनाधिक एक प्रकार के हों, और एक ही कार्य करते हों। ऐसे तंतु भी पिण्ड शरीर वनस्पतिओं में अधिक नहीं होते। ब्रायोफाइटा श्रेणी के पौधों में इनकी अपेक्षा रचना-भेद और श्रम-विभाग ऊंची कोटि का होता है, क्योंकि आन्तरिक रचना भेद और तंतु विकास के कारण उनमें तना तथा पत्तिओं का न्यूनाधिक विकास देखने में आता है। टेरिडोफाइटा श्रेणी की वनस्पतिओं में तंतु विकास इतना अधिक हो जाता है कि उनमें जड़, तना तथा पत्ती तीनों का पूर्ण विकास हुआ रहता है, और आन्तरिक रचना में नाड़ी, तंतु तथा सन्तानोत्पादक भागों में बहुत उच्च कोटि का विकास हो गया रहता है। बीज वाहक पौधों में तंतु विकास और श्रम विभाग जैसे पूर्णता को प्राप्त कर लेता है, और भिन्न-भिन्न कार्यों के लिये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भिन्न-भिन्न अंगों तथा तंतुओं का पूर्ण विकास हो जाता है—इनमें ऐसे सन्तानोत्पादक भागों का विकास हो जाता है जिन्हें पुष्प कहते हैं, जिनके द्वारा सन्तानोत्पत्ति बहुत सुगम और श्रेष्ठ-कोटि की हो जाती है।

वानस्पतिक यंत्र की कार्य प्रणाली तथा मनुष्य कृत यंत्र से उसकी तुलना—किसी भी पौधेमें शारीरिक विकास तथा रचना भेद चाहे जिस कोटि का हो, उसके कार्य दो तरह के होते हैं, (१) वानस्पतिक (२) सन्तानोत्पत्ति सम्बन्धी। वानस्पतिक, अर्थात् अपने निजी शरीर से सम्बन्ध रखने वाली क्रियाओं में जिनके द्वारा वे अपनी शारीरिक वृद्धि तथा अपने व्यक्तित्व की रक्षा करने में समर्थ होते हैं; पृथ्वी, जल तथा वायु मंडल से खाद्य पदार्थों का शोषण, आवश्यकतानुसार शरीर के भिन्न-भिन्न भागों में निर्मित तथा अनिर्मित पदार्थों का वितरण, खाद्य पदार्थों का निर्माण, भिन्न-भिन्न कार्यों के लिये उन्हीं निर्मित खाद्य पदार्थों का विश्लेषण तथा जल का शोषण एवं त्याग आदि क्रियायें मुख्य हैं। इसके विपरीत, सन्तानोत्पत्ति सम्बन्धी क्रियाओं से वे केवल अपनी वंश परम्परा को स्थायी बनाने और वंशवृद्धि करने में समर्थ होते हैं। पौधा इन्हीं कार्यों को करता हुआ एक जीवित यंत्र के तुल्य समझा जाता है, जो ऐसे रासायनिक पदार्थों का निर्माण करता है, जिनकी उपयोगिता केवल उसकी शारीरिक वृद्धि तथा सन्तान के लिये न होकर अन्य पौधों तथा जन्तुओं के लिये भी होती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मनुष्य कृत यन्त्र की अपेक्षा इस यंत्र में यह विशेषता होती है कि वह अपने ही जैसे अन्य छोटे-छोटे यंत्रों को भी उत्पन्न कर देता है, जो कालान्तर में वैसे ही हो जाते हैं। जिस तरह एक निर्जीव यंत्र के भिन्न-भिन्न अवयव इस प्रकार क्रम-बद्ध रहते हैं, कि यन्त्र के चालू करने पर वे स्वयं अपना-अपना काम करने लगते हैं, उसी प्रकार इस यंत्र के अवयव भी एक निश्चित क्रम में रहकर ही अपना-अपना कार्य कर सकते हैं। जैसे यदि किसी पौधों को जड़ से उखाड़ कर उसे उल्टा जमीन में गाड़ दें, जिससे पत्तियां जमीन के अन्दर हो जायं, और जड़ प्रकाश अथवा वायु मण्डल में हो जाय, तो पौधा जीवित नहीं रह सकता। फिर यदि किसी पौधे की जड़ें काटकर अलग कर दी जायँ तो पौधे के लिये जल प्राप्त करने का मार्ग बन्द हो जायगा, और पत्तियां मुर्झा जायँगी। इसी तरह पत्तियों को तोड़ देने पर खाद्य पदार्थों का बनना ही बन्द हो जायगा। औरों की बात तो अलग रहे, यदि पौधों की केवल छाल ही अलग कर दी जाय, तो नीचे के भागों को ऊपर से आने वाले भोज्य पदार्थों से वंचित होना पड़ता है। वानस्पतिक शरीर में इस प्रकार की अन्योन्याश्रिता (Interdependence) केवल उसके स्थूल अवयवों में ही नहीं होती, वरन्, उसके सूक्ष्मतम तंतुओं तथा कोष्ठों में भी पायी जाती है। वे ही कोष्ठ जो शारीरिक रचना के सूक्ष्मतम एकाङ्ग कहे जाते हैं।

बीजवाहक पौधों की मानव जीवन में प्रधानता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तथा उनकी सामान्य रचना और जीवन चरित्र।

यहां इस बात का उल्लेख कर देना आवश्यक और संगत होगा कि उपर्युक्त श्रेणियों में से वीजवाहक पौधे और उनमें भी विशेष करके आवृत्त-वीजी पौधे ही हमारे विशेष आकर्षण और ध्यान देने की वस्तु रहे हैं। चाहे यह बात उनके विशेष गुणों के कारण हुई हो, चाहे विकास क्रम में उनके सर्वोपरि स्थान ग्रहण करने के कारण हुई हो, चाहे सुन्दर आकर्षक पुष्पों के कारण वे हमारे विशेष ध्यान के अधिकारी हो गये हों, पर अनादि काल से मानव जीवन से उनका बहुत निकट का सम्बन्ध चलता आ रहा है। सम्भव है कि अन्य श्रेणी के पौधे भी हमारे लिये इन्हीं की तरह उपयोगी हों, और राई की कज्जली (Ergot of Rye) की तरह हमारे काम की वस्तु प्रमाणित हो जायं, परन्तु अभी उनमें ऐसे पौधों की संख्या कम है। इसका यही कारण सम्भवतः हो सकता है, कि वे प्रायः छोटे और अनाकर्षक होने के कारण प्राचीन काल में मनुष्यकी व्यवहारोपयोगी खोजों के विषय नहीं बन सके थे। पुष्प वाले पौधों का हमारा ज्ञान-भाण्डार इतना बड़ा और उपयोगी हो गया है, उनका अध्ययन प्रारम्भ के विद्यार्थियों के लिए इतना सरल और सुविधाजनक होता है, कि आगे के पृष्ठों में केवल उन्हीं का विवेचन किया गया है। यद्यपि यहां इनके अंगों, प्रत्यंगों तथा जीवन की मुख्य-मुख्य घटनाओं पर अलग-अलग विचार किया गया है, तथापि इस विधि से हमें यही दिखाना अभीष्ट है, कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वे अपना जीवन-चक्र किस प्रकार पूरा करते हैं, और अपनी रचना तथा कार्य-प्रणाली में पूर्ण सामंजस्य होने के कारण वे एक वाद्ययंत्र की तरह समस्वर से बजते हुए किस तरह सुमधुर जीवन झंकार उत्पन्न कर देते हैं।

किसी एक प्रामाणिक पुष्पवाहक पौधे का शरीर मुख्यतः दो भागों का बना होता है, एक को प्रांकुर (Shoot) कहते हैं जो वायवीय होता है, और प्रायः कांड (Stem) पत्ती, पुष्प तथा फलों का बना होता है। दूसरे भाग को जो जमीन के अन्दर होता है, जड़ (Root) कहते हैं। काण्ड तथा उसकी शाखायें ग्रन्थिओं (nodes) और पर्वों (Internode) में विभक्त रहती हैं। ग्रन्थि काण्ड का वह भाग है, जहां से पत्ती शाखा पुष्प आदि निकलते हैं। यह भाग प्रायः न्यूनाधिक मोटा होता है। समीपवर्ती ग्रन्थिओं के बीच के भाग को पर्व कहते हैं। पत्तियां साधारणतः द्विपृष्ठी (Bifacial) होती हैं अर्थात् वे चिपटी और पतली होती हैं, और अस्थिपंजर की तरह नसों का जाल उन्हें सुदृढ़ रखता है। वे एकहरे पदार्थ Chlorophyll से युक्त होने के कारण हरी होती है। इनका लगाव तने से कहीं-कहीं एक डण्ठल के द्वारा होता है, जिससे यह नाल (Petiole) और फलक (Blade) दो भागों की बनी हुई मालूम होती है, और कहीं-कहीं फलक नाल हीन होने के कारण सीधे तने से लगा रहता है, पुष्प संख्या में एक अथवा एक से अधिक होते हैं, और वे भी पत्तियों की तरह सनाल और विनाल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होते हैं। परिस्थिति के अनुसार पुष्पों के वर्ण आदि में व। कभी भिन्नता भी हो जाती है। भिन्न-भिन्न उपजातिओं व पुष्पों के वर्ण, आकार, रचना आदि में बहुत विभिन्नता होती है। जड़ जमीन के अन्दर प्रायः दूर २ तक फैली रहती है। प्रायः सभी में पौधों के कद के अनुसार जड़ों का कम या अधिक विस्तार पाया जाया है।

जड़ की शाखाओं के अन्तिम भाग बहुत सूक्ष्म रोमवत् रचनाओं से ढके रहते हैं, जो मिट्टी के कणों के बीच-बीच में फैले रहते हैं। मिट्टी के कणों के बीच-बीच में जो जल का अंश रहता है, उसमें जमीन के खानिज लवण घोल रूप में मौजूद रहते हैं। जड़-रोम उसी का शोषण करके उसे ऊपर पहुंचाते रहते हैं। यह घोल काण्ड की रस-ग्राहक नलिकाओं से होता हुआ पत्तियों में पहुँचता है। पत्तियां वायु मण्डल से Co_2 अपने सूक्ष्म छिद्रों (Stomata) द्वारा भीतर लेती हैं, और क्लोरोफिल की सहायता से सूर्य के प्रकाश में बाहर से आये हुए पदार्थों की सहायता से शर्करा, स्टार्च तथा प्रोटीन आदि नाम के पदार्थ बनाती रहती हैं। वस्तुतः ये ही पदार्थ हैं, जिनको वे पौधे तथा उन पर जीवन निर्वाह करने वाले जन्तु अपने असली खाद्य पदार्थों की तरह काम में लाते हैं। पौधे के जिस भाग में वृद्धि होती रहती है, अथवा जहां इसकी आवश्यकता होती है, रसवाहक नालिकाओं द्वारा वहां ये पदार्थ पहुंचा दिये जाते हैं। इस तरह पौधे अपना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

खाद्य पदार्थ स्वयं बनाते हैं और अपने शरीर की वृद्धि करते रहते हैं। पौधों को अपने जीवन सम्बन्धी क्रियाओं को करने के लिये जो शक्ति की आवश्यकता होती है उसे भी वे इन्हीं खाद्य पदार्थों के विश्लेषण से प्राप्त करते हैं। श्वसन क्रिया जन्तुओं और वनस्पतिओं में इसी अभिप्राय से और एक ही तरह से होती है अर्थात् दोनों वायु-मण्डल से आक्सीजन लेकर उसी की सहायता से अपने खाद्य पदार्थों का विश्लेषण करते हैं और इससे जो Co_2 गैस पैदा होती है उसे छोड़ देते हैं, और जो शक्ति प्राप्त होती है उससे अपना काम करते हैं। यह क्रिया जीवन की हर अवस्था में तथा हर समय न्यूनाधिक मात्रा में हुआ करती है।

इस तरह शारीरिक वृद्धि करते हुए जब पौधे परिपक्वावस्था को प्राप्त होते हैं, तो उन्हें सन्तानोत्पादन की व्यवस्था करनी पड़ती है। अतः जहां शाखायें निकलती थीं, वहां पुष्प नाम की नवीन रचनायें प्रकट होने लगती हैं। इसमें प्रायः नर और नारी दो भाग होते हैं, और इन्हीं दोनों के सहयोग से अथवा लौकिक रीति से प्रायः सन्तानोत्पत्ति होती है। जिस तरह जन्तुओं में रज और वीर्य के मिलने से गर्भ स्थिति होती है, उसी तरह यहां भी पुष्प के अन्दर नर-कोष्ठ नारी-कोष्ट से आकर मिलता है और गर्भाधान होता है। नर-कोष्ट पुष्प के पराग कणों में बनता है, जो कीड़े तथा अन्य साधनों से गर्भाशय के सम्पर्क में पहुंचा दिये जाते हैं। पुष्पों में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मधु, सुगन्ध तथा सुन्दरता इसलिये होती है कि जिससे वे इन कीड़ों को आकर्षित कर सकें और इन प्रलोभनों द्वारा उनका सहयोग प्राप्त करके अपनी सन्तानोत्पत्ति करा सकें। इसीलिये जब पुष्पों के परागकण यथास्थान पहुंच जाते हैं, तो पुष्प मुर्भा जाता है, क्योंकि तब गर्भाधान भी हो जाता है और कीड़ों की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। गर्भ गर्भाशय में बढ़ते-बढ़ते जब परिपक्व हो जाता है, तो वही वीज के नाम से प्रसिद्ध होता है, और सम्पूर्ण गर्भाशय, जिसके अन्दर वीज बन्द रहता है, फल के नाम से प्रसिद्ध होता है।

जब तक जनक-पौधे से वीज अलग नहीं होता, तब तक उसकी रक्षा फल ही द्वारा होती है। फल इसके अतिरिक्त वीज का प्रायः दूर देशीय प्रसार भी कराता है, क्योंकि यदि उनका प्रसार न कराया जाय तो सब जनक-पौधे के नीचे गिरेंगे और स्थानाभाव के कारण अपनी वृद्धि न कर सकेंगे। इसीलिये बहुत से फल प्रायः जन्तुओं के लिये देखने में सुन्दर, खाने में मधुर तथा पुष्टि दायक होते हैं, और यों तो जन्तु उन्हें अपने स्वार्थ से ले जाते हैं, पर इससे वीज का प्रसार हो जाता है। इसी प्रकार वीज-प्रसार भिन्न-भिन्न तरह से तथा भिन्न-भिन्न साधनों के द्वारा होता है। वीज जब ऐसी जमीन में पहुंचता है, जहां उसे अंकुरित होने के लिये अवस्थायें होती हैं, तब वह वीज अथवा नवजात सन्तान, जो गर्भाशय के अन्दर बढ़कर कुछ समय के लिये अपनी वृद्धि बन्द कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मानों सुप्तावस्था में विश्राम कर रहा था, फिर अपनी वृद्धि करने लगता है, और शीघ्र एक शिशु वनस्पति का रूप धारण कर लेता है, जिसमें तना, पत्ती तथा जड़ें क्रमशः बन जाती हैं। जब तक पत्तियां नहीं रहतीं, तब तक चूंकि वह शिशु वनस्पति अपना खाद्य-पदार्थ स्वयं नहीं बना सकता, इसलिये वह अपनी पैत्रिक सम्पत्ति पर निर्वाह करता है, जो शर्करा, स्टार्च, तैल आदि खाद्य पदार्थों के रूप में जनक-पौधे द्वारा बीज के अन्दर संचित रहता है। कुछ समय के बाद वह शिशु वनस्पति बढ़कर जनक पौधे की तरह हो जाता है। इस तरह पौधे का जीवन चक्र समाप्त हो जाता है।

पुष्प वाले पौधों की रचना तथा जीवन चक्र का जो संक्षिप्त विवरण यहां दिया गया है, वही आगे चलकर बहुत विस्तृत और व्यापक बनाया जायगा। प्रत्येक अङ्ग पर अलग-अलग विचार करने के पहले पौधों के दो मुख्य भागों (प्रांकुर और मूल) के भेदों को जान लेना आवश्यक है—

प्रांकुर तथा मूल में भेद—(१) मूल की वृद्धि पृथ्वी की ओर और प्रकाश से विरुद्ध होती है, परन्तु काण्ड प्रकाश की दिशा में और पृथ्वी से विमुख होकर बढ़ता है।

(२) ताजी जड़ प्रायः सफेद रंग की होती है, और उसमें हरापन कभी नहीं आता, परन्तु तना हरा तथा अन्य किसी रंग का हो सकता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(३) तने में पर्व और ग्रन्थियां होती हैं। पत्तियां ग्रन्थियों पर और शाखायें पत्तियों के अक्षकोण (Axil) में ही निकलती हैं। जड़ में पर्व, ग्रन्थि तथा पत्तियों का अभाव होता है, और उनका शाखा-क्रम भी अनियमित होता है।

(४) आन्तरिक रचना में जड़ और तना दोनों एक दूसरे से बहुत ही भिन्न होते हैं। दोनों का अन्तिम निर्णय इसी लक्षण से होता है।

(५) जड़ की शाखाओं का उद्गम स्थान भीतरी तंतुओं में होता है, जिससे वे अन्तर्जात (Endogenous) कही जाती हैं, परन्तु तनों की शाखायें वहिर्जात (Exogenous) होती हैं क्योंकि उनकी उत्पत्ति बाहरी तंतुओं से ही होती है।

(६) तनों का वृद्धिशील अग्रभाग अविकसित नवीन साधारण पत्तियों अथवा वल्कपत्रों (Scale leaf) से ढका रहता है, परन्तु जड़ में अग्रभाग केवल एक विशेष तंतु से, जिसे जड़-कोष (Root cap) कहते हैं, ढका रहता है।

(७) साधारण कलिकायें (Buds) पुष्प तथा पुष्प कलिकायें तनों पर होती हैं। जड़ से वे कभी नहीं निकलती। कभी-कभी वानस्पतिक कलिका की उपस्थिति जड़ में भी देखने में आती है।

(८) तने पर यदि रोम होते हैं, तो उनका मुख्य कार्य केवल रक्षा सम्बन्धी होता है, और उनकी उपस्थिति सम्पूर्ण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पृष्ठ पर हो सकती है। जड़-रोम सर्वदा जड़-कोष के ऊपर एक निश्चित भाग में होते हैं और उनका मुख्य कार्य पृथ्वी से लवण-मिश्रित जल का शोषण करना होता है।

(६) नवीन तनों में रन्ध्र (Stomata) तथा पुरानी छालों में कार्करन्ध्र (Lenticel) पाये जाते हैं, पर, जड़ों में नहीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रथम भाग

वाह्यरचना (External Morphology)

परिच्छेद १

जड़ (Root).

वीजोद्भेद (Germination) के समय वीज से जो पहले पहल अङ्कुर निकलता है, वही ज़मीन के अन्दर नीचे की ओर जाकर जड़ के नाम से प्रसिद्ध होता है। इससे क्रमशः शाखायें तथा प्रशाखायें निकलती जाती हैं। यदि किसी शाखा अथवा प्रशाखा की परीक्षा की जाय तो मालूम होगा, कि उसका वृद्धिशील भाग उसके अग्रभाग के ठीक पीछे है। इसीलिये उसके अग्रभाग पर नवीन भागों की रक्षाके लिये जड़-कोष नाम का तन्तु होता है। जड़कोष के पीछे जड़ का दूसरा भाग होता है, जो बहुत सी कोमल रोमवत् सूक्ष्म रचनाओं से ढका रहता है, जिन्हें जड़रोम (Root-hair) कहते हैं। ये बहुत थोड़े दिनों के बाद ही सूख जाते हैं। शोषण का मुख्य कार्य इन्हीं जड़रोमों द्वारा होता है। ये रोम मिट्टी के कणों के बीच २ में फैले रहते हैं। प्रत्येक कण जल से घिरा होता है और उस जल में मिट्टी के खनिज लवण घोल रूप में मौजूद रहते हैं। जड़रोम इसी घोल का शोषण करके उसे बड़ी २ जड़ों में पहुँचाते हैं। फिर वह घोल जड़ों तथा तने के रसवाहक तन्तुओं द्वारा पत्तियों में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहुँचता है। इसीलिये जड़ें उसी ओर बढ़ती हैं, जिधर यह घोल पर्याप्त मात्रा में रहता है। जैसे २ जड़ें इसकी खोज में आगे बढ़ती जाती हैं, उनमें नये २ जड़रोम बनते जाते हैं, और पुराने नष्ट होते जाते हैं। जड़रोमों के पीछे के भाग से शोषण का कार्य नहीं होता। अतः अधिकतर सभी जड़ों में चार भाग अर्थात्—(१) जड़कोष (२) वृद्धिशील भाग (३) जड़रोम-युक्त भाग तथा (४) परिपक्व भाग पाये जाते हैं।

जड़ के भेद—जब प्रारम्भिक जड़ (Primary root) अपनी शाखाओं प्रशाखाओं के द्वारा एक विस्तृत जड़ संस्थान (Root System) की रचना कर लेती है, जिससे पौधे की प्रायः सभी आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं, तो उसे नियमित जड़ संस्थान (Tap Root System) कहते हैं। इसमें सबसे बड़ी और प्रधान जड़ को (Tap root) नियमित प्रधान जड़ कहते हैं। कहीं कहीं प्रारम्भिक जड़ को वृद्धि रुक जाने के कारण तथा उसकी शाखाओं के बहुत बढ़ जाने के कारण शाखायें ही प्रधान मालूम होती हैं। बहुत से पौधों में नियमित जड़ संस्थान अथवा प्रारम्भिक जड़ का पर्याप्त विकास नहीं होता तो उनमें अन्य भागों से सहायक जड़ें निकल आती हैं। जैसे मक्का ज्वार आदि में जमीन के समीप तने से बहुत सी जड़ें निकली रहती हैं। दूब जैसे विसर्पी (Creeping) तनों से तथा ब्रायोफाइलम तथा वेगोनिया आदि पौधों में पत्तियों से भी जड़ें निकली रहती हैं। ऐसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सब जड़ों को जो प्रारम्भिक जड़ अथवा उसकी शाखाओं से न निकलकर पौधे के किसी अन्य भाग से निकलती है, अनियमित जड़ें (Adventitious Root) कहते हैं। प्रायः ऐसा देखा जाता है, कि जब जल ज़मीन के बहुत नीचे होता है, तो प्रारम्भिक जड़ का ही विकास होता है, जैसे मरुभूमि के पौधों में। परन्तु यदि वही पौधे ऐसी ज़मीन में हों जहां जल ज़मीन की सतह के समीप ही होता है, तो उनमें अनियमित जड़ें भी निकल सकती हैं।

उत्पत्ति स्थान के विचार से जड़ के दो मुख्य भेद हुए। परिस्थिति तथा कार्य के अनुसार भी जड़ों के अनेक भेद हैं। परिस्थिति तथा साधारण रहन-सहन (Habit) के अनुसार उनके आकार तथा रचना में भिन्नता होती है। वार्षिक (Annual) अथवा एक ऋतु तक जीवित रहने वाले पौधों की जड़ें प्रायः छोटी होती हैं। वे या तो बहुत छोटी प्रारम्भिक जड़ से निकलने वाली गौण शाखायें होती हैं, जो मुख्य जड़ से गुच्छे के रूप में निकली रहती हैं, अथवा प्रारम्भिक जड़ से पार्श्वीय छोटी-छोटी शाखाओं के रूप में उत्पन्न होती हैं। कुछ पौधे एक ऋतु में अपनी वानस्पतिक वृद्धि करते हैं, और आवश्यकता से भी अधिक भोज्य पदार्थों का निर्माण करते हैं, और उस ऋतु के अन्त तक वे खर्च से बचे हुए खाद्य पदार्थों को अपनी जड़ों में जमा करते जाते हैं। दूसरे ऋतु में उनमें फूल फल आने लगते हैं, और उस समय पहले के संचित भोज्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पदार्था को अपने काम में लाते हैं। भोज्य पदार्थों के संचित हो जाने के कारण इन द्वि-वार्षिक (Biennial) पौधों की प्रारम्भिक जड़ें मोटी तथा मांसल होकर गर्जर की तरह शंक्वाकार (Conical), मूलकाकार (Fusiform) अथवा सलज़माकार (Napiform) बन जाती हैं। गाजर में ऊपर सबसे मोटी और अग्र की ओर क्रमशः पतली, मूली में बीच में सबसे अधिक मोटी और दोनों शिरों पर क्रमशः पतली और सलज़ममें ऊपर बहुत मोटी और अग्रपर एकायक बहुत पतली जड़ें होती हैं। बहुत से एक वार्षिक पौधों में भी साधारण जड़ों के अतिरिक्त ऐसी जड़ें होती हैं, जिनमें खाद्य पदार्थ संचित किये जाते हैं। ऐसी जड़ें प्रायः उन पौधों में पायी जाती हैं जिनके वायवीय भाग प्रतिवर्ष नष्ट हो जाते हैं, पर उनके भौमिक भाग बहु-वार्षिक (Perennial) होते हैं और उन्हीं से प्रतिवर्ष पौधे की उत्पत्ति होती है। ऐसी जड़ें भी आकार के अनुसार भिन्न-भिन्न तरह की होती हैं जैसे माला-कन्द में मूलकन्दों की माला सी बनी होती है। मोथा में जड़ों के अग्रभाग कन्दवत हो जाते हैं, और इपेकाक्वानहा (Ipecacuanha) नामक विदेशी और औषधीय पौधे की जड़ जगह-जगह पर मोटे तथा गोले कन्दों के रूप में होती है।

निवासस्थान के अनुसार जमीन पर होने वाले पौधों की जड़ों को स्थलीय (Terraneous) अन्य वृक्षों के काण्डों पर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फैलने वाली जड़ों को वृत्त-प्रसरिणी (Epiphytic) तथा जल में होने वाले पौधों की जड़ों को जलीय (Water roots) जड़ें कहते हैं। लाक्षाणिक स्थलीय जड़ों का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। उनमें कुछ विशेष प्रकार की जड़ें हैं जो ध्यान देने योग्य हैं। वटवृक्ष के तनों से अनेकों अनियमित जड़ें निकलकर वायु में झूला करती हैं। पुराने वृक्षों में जमीन तक पहुंची हुई रहती हैं, और दिगन्तसम फैली हुई बड़ी-बड़ी डालियों के लिये ये अवलम्ब स्वरूप होती हैं। इसके कारण ये वृक्ष बहुत दूरी में अपना प्रसार कर लेते हैं, जैसे बोधी-वट वृक्ष अथवा कलकत्ते के वैज्ञानिक उद्यान का प्रसिद्ध वटवृक्ष, पैण्डेनस तथा राइजोफोरा के वृक्षों में वास्तविक तना पतला और दुर्बल होता है। अतः तने से बड़ी-बड़ी जड़ें निकलकर तने से लिपट जाती हैं, और उसे सुदृढ़ बना देती हैं। ऐसी जड़ों को पादासक्त जड़ें (Brace roots) कहते हैं। बहुत से उष्ण प्रदेशीय वृक्षों में बड़ी-बड़ी जड़ों से चौड़े-चौड़े तख्तों समान वहिरुद्भेद (Outgrowth) बन जाते हैं, जो उन वृक्षों को उसी प्रकार मजबूत बनाये रखते हैं, जैसे ऊंची दीवाल वाले मकानों को नीचे की पुश्तियां।

वृक्षों पर होने वाले पौधों को पृथ्वी से खाना नहीं मिलता। उनको अपना भोजन अधिकतर वायु से ही लेना पड़ता है। उनकी जड़ें तनों पर फैली रहती हैं, और उनके वाह्य चर्म के दरारों में प्रवेश करके उनके अन्दर आये हुए कूड़े कर्कट से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुछ न कुछ भोजन पा जाती हैं। उनकी जड़ें ऐसी भी होती हैं कि वायु से जल ग्रहण कर सकती हैं। कुछ पौधों की ये जड़ें हरी होकर भोज्य पदार्थ भी बना लेती हैं। वृक्ष पर फैलने वाली जड़ें रास्ना जाति तथा आरकिड नाम की वनस्पतिओं में होती हैं।

जलीय जड़ें प्रायः लम्बी शाखाहीन तथा मांसल होती हैं। इनमें जड़ कोष तथा जड़रोम भी नहीं होते। इनकी रचना बहुत ही साधारण परन्तु परिस्थिति के अनुकूल होती है।

दलदलों में होने वाले मानग्रोव (Mangrove) जाति के पौधों की जड़ों को श्वसन करने के लिये पृथ्वी के अन्दर वायु नहीं मिलती। इसलिये वे ज़मीन के ऊपर निकली रहती हैं, और वायु-मण्डल से वायु ग्रहण करती रहती हैं। इन जड़ों को (Nematophores अथवा Breathing Roots) कहते हैं। परजीवी पौधों में, जैसे अमरवेलि आदि में, वायवीय जड़ों से छोटी-छोटी शाखायें निकलकर उन पौधों के रसवाहक तंतुओं से सम्बन्ध स्थापित कर लेती हैं, जिनपर पर वे फैली रहती हैं। इसके द्वारा परजीवी पौधे रस चूसते रहते हैं। इसलिये इन्हें परजीवी जड़ें (Parasitic Roots अथवा Haustoria) कहते हैं।

मूल हीन पौधे—उच्च श्रेणी के बहुत से पुष्प वाले पौधों में परिस्थिति के कारण कहीं-कहीं जड़ का पूर्ण अभाव पाया जाता है। जैसे लेम्ना जाति के पौधों में जो जल के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऊपर होते हैं, जड़ का विकास कम अथवा बिलकुल नहीं हुआ रहता। इसी तरह युटीकुलेरिया जाति के मांसाहारी पौधों में कुछ थोड़ी सी सूत्रवत जड़ें होती हैं, जिन्हें राइज्वायड (Rhizoid) कहते हैं। पुष्पहीन पौधों के अन्तर्गत ब्रायोफाइटा और टेरिडोफाइटा श्रेणी के जो पौधे हैं उनमें प्रायः सूत्रवत् जड़ तुल्य रचनायें होती हैं, उन्हें भी राइज्वायड कहते हैं। उनमें शोषण का कार्य इन्हीं रचनाओं द्वारा होता है।

जड़ों के कार्य—ऊपर के विवरण से जड़ों द्वारा सम्पादित होने वाले कार्यों का भी पता चल चुका है, जिनमें जल तथा खानिज लवणों का शोषण तथा उनका वहन (Conduction) तथा आंधी आदि के समय पौधों को एक स्थान पर सुदृढ़ बनाये रखने के कार्य मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त वे विशेष परिस्थियों में विशेष प्रकार के कार्य भी करती हैं। जैसे खाद्य पदार्थों का संचय (जैसे सतावर सकरकन्द में कन्दवत अनियमित जड़ों द्वारा) श्वसन, खाद्य पदार्थों का निर्माण, सन्तानोत्पादन, अवलम्बन, आरोहण तथा रक्षा के कार्य भी कभी-कभी इन जड़ों द्वारा सम्पादित होते हैं। इन कार्यों के लिये उन्हें भिन्न-भिन्न रूप तथा आकार भी धारण करना पड़ता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिच्छेद २

तना (Stem).

बीजोद्भेद के समय गर्भ अथवा नवजात सन्तान बीज के बाहर दो अङ्कुरों के रूप में निकलता है। पहले अङ्कुर से जड़ बनती है, और दूसरे से, जो पहले से ही सम्बन्धित रहता है, प्राङ्कुर बनता है। यह प्राङ्कुर जैसे-जैसे लम्बाई में बढ़ता है, उसमें क्रमशः ग्रन्थि, पर्व तथा ग्रन्थिओं पर पत्तियां बनने लगती हैं। पत्तियों के अक्षकोणों (Axils) में कलिकायें प्रकट होने लगती हैं। ये अक्षकोणीय कलिकायें फिर बढ़कर शाखाओं अथवा पुष्पों में परिवर्तित हो जाती हैं।

यदि किसी शाखा अथवा मुख्य तने के अग्रभाग की परीक्षा की जाय, तो मालूम होगा, कि अग्रभाग के चारों ओर बहुत छोटी-छोटी पत्तियां हैं, जो वृद्धिशील अग्र को भलीभांति ढके हुई हैं। इसी भाग को, जिसमें ग्रन्थि, संक्षिप्त पर्व तथा बहुत छोटी-छोटी पत्तियां सम्मिलित हैं, कलिका (Bud) कहते हैं जैसे-जैसे वृद्धिशील अग्र बढ़ता जाता है वैसे ही पत्तियों को भी वृद्धि होती रहती है। अतः कलिका को अविकसित शाखा कह सकते हैं। जिन कलिकाओं से तने लम्बाई में बढ़ते हैं वे तनों के अग्र पर होती हैं और अग्रस्थित कलिका (Terminal bud) कही जाती हैं। चूंकि शाखायें तने के पार्श्वीय भाग से निकलती हैं, और सर्वदा पत्तियों के अक्षकोण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में होती हैं. अतः जिन कलिकाओं से अक्षकोणीय शाखाओं की उत्पत्ति होती है, उन्हें अक्षकोणीय कलिका (Axillary bud) कहते हैं। कहीं-कहीं कलिकायें कद में बहुत बड़ी भी होती हैं। उनके पर्व तथा पत्र न्यूनाधिक बड़े होते हैं, और उनमें पुष्प भी पाये जा सकते हैं, जैसे पातगोभी में। आवृत-बीजी पौधों में प्रायः नियमित रूप से पत्तिओं के अक्षकोण से एक-एक शाखा अथवा कलिका निकलती है, परन्तु साथ ही ऐसे उदाहरणों की भी कमी नहीं है, जिनमें अक्षकोणों के अतिरिक्त अन्य स्थानों से भी सहायक कलिकायें (Accessory bud) निकलती हैं। कहीं-कहीं ऐसी भी कलिकायें पायी जाती हैं, जिनके निकलने का कोई विशेष क्रम नहीं होता। वे अग्र तथा अक्षकोणों में न होकर पौधे के किसी भाग से निकल सकती हैं। ऐसी कलिकायें परवल और गुलाब की जड़ों में और हिमसागर (Kalanchol) तथा पथरकुचा (Bryophyllum) की पत्तियों पर होती हैं। इन्हें अनियमित कलिका (Adventitious) कहते हैं। इनसे उपर्युक्त पौधों की वानस्पतिक सन्तानोत्पत्ति होती है। पौधे ऐसी कलिकाओं का तभी आश्रय लेते हैं, जब इन्हें विशेष परिस्थितिओं का सामना करना पड़ता है। जैसे बहुत से पौधे जब कुछ ऊपर तने पर काट दिये जाते हैं, तो उनमें कटे हुए भाग के समीप ऐसी वृद्धि शक्ति आ जाती है कि वहां से थोड़े समय में ही अनेकों शाखायें निकल आती हैं। ऐसी शाखायें इन्हीं अनियमित कलिकाओं से बनती हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुछ कलिकायें क्रियाशील (Active) होती है, जो विश्राम लिये बिना बढ़ती जाती हैं, और कुछ अनुद्भूत (Dormant) कही जाती हैं, जो बहुत समय तक सुप्तावस्था में पड़ी रहती हैं और विशेष परिस्थिति में पड़ जाने पर ही उनका विकास होता है। जैसे बरगद को बहुत दिन की पड़ी हुई सूखी डालिओं से जो नई-नई शाखायें निकल आती हैं वे इन्हीं कलिकाओं से बनती हैं। जलवायु की अत्यन्तावस्थाओं में Extreme conditions) कलिकाओंको परिस्थितिके अनुकूल होना पड़ता है। इसी लिये बहुत से क्षुप तथा वृक्षों की कलिकाओं में ऐसी रचनायें पायी जाती हैं जो उनके अन्दर के कोमल भागों को सुरक्षित रखती हैं, बहुतों में कलिकायें प्रायः ऐसी छोटी-छोटी पत्रवत् रचनाओं से ढकी रहती हैं जिन्हें वल्कपत्र (Scale leaf) कहते हैं, और जो कलिका के बढ़ने के समय सूख कर गिर जाती है, जैसे बरगद में। अधिक शीत और शुष्क जलवायु में होनेवाले पौधोंमें वल्की कलिकायें (वल्कपत्र युक्त अथवा Scaly buds) बहुत पायी जाती हैं, जिनके वल्कपत्र रोमों अथवा अनेक प्रकार के निर्यासों से युक्त होने के कारण अपनी रक्षा भली भांति कर लेते हैं। वल्कपत्रों तथा अन्य भागों से जो गोंद (Gum) तथा रेजिन नाम के निर्यास निकलते हैं, अथवा उनपर जो रोम होते हैं, उन सबका कार्य कलिकाओं आदि की अत्यन्त शीत तथा असह्यताप वा अधिक जल त्याग से रक्षा करने का होता है। साधारण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिस्थितिकी कलिकायें प्रायः नग्न (Naked होती हैं क्योंकि उनमें वल्कपत्र नहीं होते।

स्वतन्त्र कलिका ('Bulbil)—कुछ पौधों में एक विशेष और विचित्र प्रकार की कलिका होती है, जिसे स्वतन्त्र कलिका (Bulbil) कहते हैं। इसकी रचना साधारण कलिका से भिन्न होती है, अतः इसे कलिका का रूपान्तर (Modification) कह सकते हैं। जिन पौधों में से कलिकायें होती हैं, उनकी सन्तानोत्पत्ति इन्हीं की सहायता से होती है। ये अन्नकोशीय होती हैं, और जब पौधे से टूट कर गिरती हैं, तो इनमें वृद्धि होने लगती है, जिससे क्रमशः जनक-पौधे के समान एक नया पौधा तैयार हो जाता है। चूंकि कलिका की वृद्धि के लिये जनक पौधे से कुछ भी सहायता उस समय नहीं मिलती, इसलिये इन कलिकाओं में पहले ही से भोज्य पदार्थ संचित कर दिये जाते है। इसी कारण से ये कलिकायें बहुत बड़ी और मांसल होती हैं। प्याज जाति में पुष्प व्यूह भाग में इस प्रकार की कलिकायें पायी जाती हैं। लिलियम (Lilium) तथा डायस्कोरिया जाति के पौधों में, जिनमें वाराही-कन्द की लता भी शामिल है, ऐसी कलिकायें पायी जाती हैं।

कलिकाओं का उपर्युक्त वर्गीकरण उनके उत्पत्ति स्थान, विकासकाल तथा रचना और कार्य के आधार पर किया गया है। कलिकाओं की वृद्धि से कैसे-कैसे भाग प्राप्त होते हैं इस दृष्टि से भी उनके कई भेद बतलाये जाते हैं, जैसे साधारण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शाखा उत्पन्न करने वाली वानस्पतिक कलिका Vegetative पुष्प अथवा पुष्प व्यूह उत्पन्न करनेवाली पुष्प कलिका (Flower bud) अथवा पुष्प व्यूह कलिका तथा साधारण शाखा और पुष्प दोनों को उत्पन्न करने वाली मिश्रित कलिकायें (Mixed buds) कही जाती हैं। अन्तिम प्रकार की कलिकायें सेव, नासपाती, अंगूर तथा पुष्प-व्यूह-कलिका तून में पायी जाती है।

तनों के भेद—उच्च श्रेणी के पौधों में तने पौधों की रहन-सहन तथा परिस्थिति के अनुसार भिन्न:२ आकार प्रकार के होते हैं। साधारणतः तने तीन प्रकार के होते हैं, स्वावलम्बी (Erect) विसर्पी (Creeping) तथा आरोही (Climbing) अधिकतर पौधों के तने बिना किसी आश्रय के ऊपर बढ़ते हैं और उन्हें स्वावलम्बी कहते हैं। बहुत पौधों में तने इतने दुर्बल होते हैं कि वे किसी न किसी वस्तु के सहारे ही बढ़ते हैं। तरबूज, ककड़ी आदि के पौधे जमीन पर फैले रहते हैं। उन्हें विसर्पी Creeping कहते हैं। गुड़ची, विधारा, प्रसारिणी सरीखे पौधे दूसरे पौधों पर अथवा अन्य वस्तुओं पर चढे हुए दिखायी देते हैं। इनके तनों को आरोही Climbing कहते हैं। आरोही तने कहीं-कहीं चक्रारोही (Turning) भी होते हैं अर्थात् जिनके सहारे बढ़ते हैं, उन्हें लपेटते जाते हैं जैसे गुड़ची।

विसर्पी तनों में कुछ ऐसे भी होते हैं, जो सन्तानोत्पत्ति के साधन होने के कारण कुछ विशेषता से युक्त होते हैं, इनमें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अवस्था में उपक्षुप (Under-shrub) क्षुपवत् वृक्ष (Shrubly tree) अथवा वृहत-क्षुप इत्यादि संज्ञाओं का आश्रय लेना पड़ता है।

वर्षाऋतु के प्रारम्भ होते ही सारी पृथ्वी अनेक प्रकार की असंख्य वनस्पतिओं से ढक जाती है, और शरद्ऋतु के अन्त तक वे सब पौधे फिर नष्ट हो जाते हैं। इससे यह मालूम होता है कि उस समय पौधों को ऐसी अवस्थाओं का सामना करना पड़ता है, जिनमें वे अथवा कम से कम उनके वायवीय भाग जीवित नहीं रह सकते। अतः वह वार्षिक क्षुप तथा वृक्ष प्रायः अपनी पत्तियां गिरा देते हैं, और उनके तने उस समय तक नये कार्क तन्तु से सुरक्षित हो जाते हैं। उनकी कलिकायें भी वल्कपत्रों से अपनी रक्षा कर लेती हैं। वार्षिक पौधों की मुलायम शाखायें ऐसी अवस्था में सूख जाती हैं। इन वार्षिक पौधों में भी दो तरह के पौधे होते हैं। कुछ तो अपने थोड़े जीवनकाल में पुष्प, फल तथा बीज पैदा करके तब सूखते हैं, और कुछ बिना बीज बनाये ही सूख जाते हैं। अतः ये दूसरे प्रकारके वार्षिक पौधे अपनी सन्तानोत्पत्ति उन भौमिक भागों द्वारा करते हैं, जो वायवीय भागों के सूख जाने पर भी ज़मीन के अन्दर जीवित अवस्था में पड़े रहते हैं, और दूसरे वर्ष उनसे नये पौधे तयार हो जाते हैं। ऐसे पौधों को हम मृदु बहुवार्षिक (Herbaceous perennials) भी कह सकते हैं। जिस तरह मेढ़क जाड़ों में पृथ्वी के अन्दर चले जाते हैं, और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वर्षा के आने पर फिर ऊपर आ जाते हैं, उसी तरह ये पौधे भी अपने भौमिक भागों द्वारा अपने जीवन को किसी न किसी तरह बचा लेते हैं, और इसीलिये वह वार्षिक कहे जा सकते हैं।

जिस प्रकार बीजों में कुछ न कुछ भोज्य पदार्थों का संचय रहता है, जिसकी सहायता से बीज अङ्कुरित होता है, और अङ्कुर बढ़ता है, उसी प्रकार इन भौमिक सन्तानोत्पादक भागों में भी न्यूनाधिक मात्रा में खाद्य पदार्थ जमा रहता है। इसीलिये भौमिक तनों के आकार तथा उनके सञ्चय-तन्तु की स्थिति में प्रायः बड़ी भिन्नता देखने में आती है। इन्हीं दोनों बातों के आधार पर भौमिक तनों के चार मुख्य भेद बतलाये गये हैं।

(१) राइज़ोम (Rhizome) यह लम्बा और प्रायः दिगन्तसम ज़मीन में फैला रहता है। इसमें कम या अधिक मात्रा में खाद्य पदार्थ भी होते हैं। इसमें ग्रन्थियां होती हैं, जिन पर भूरे छोटे-छोटे वल्कपत्र और कलिकायें होती हैं। कभी कभी ये छोटे होते हैं और तिरछे या सीधे ऊपर की ओर उठे हुए रहते हैं (जैसे Fern में)। राइज़ोम प्रायः सशाख (Branched) भी होता है, और उसपर अनियमित जड़ें भी पायी जाती हैं। इसलिए अगर शाखायें अलग हो जाती हैं, तो उनसे नये पौधे भी बन जाते हैं। इन तनों पर जो अक्ष-कोणीय अथवा अग्रस्थित कलिकायें होती हैं, उन्हीं के बढ़ने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से वायवीय शाखायें बनती हैं। जब वायवीय शाखायें अन्तिम कलिका से बनती हैं, तो भौमिक तना बहुपादी (Sympodial) और जब वे अक्षकोणीय कलिकाओं की वृद्धि से प्राप्त होती हैं, तो तना एकपादी (Monopodial) कहा जाता है। इसके उदाहरण केला, हल्दी, अदरक, बांस आदि के भौमिक तने हैं।

वज्रकन्द (Corm) इसे राइज़ोम का एक परिवर्त्तित रूप ही समझना चाहिये। इसमें तना फूला हुआ प्रायः गोला होता है और इसे डिस्क (Disc) कहते हैं। इस पर कई कोषमय (Sheathing) आधार वाले वल्कपत्र होते हैं, जिनके अक्षकोणों में कलिकायें होती हैं। वल्कपत्र कभी ऊपर की ओर और कभी आधार की ओर पाये जाते हैं। अनुकूल समय पाकर ये कलिकायें डिस्क के अन्दर संचित भोज्य पदार्थों का उपयोग करके बढ़ने लगती हैं और नवीन शाखाओं के रूप में ऊपर आ जाती हैं। साथ ही साथ कलिका तथा डिस्क के आधार से अनियमित जड़ें भी निकलकर पौधे को जमीन से खाद्य पदार्थ देने लगती हैं। कुछ समय के बाद पौधा स्वयं अपने लिये भोज्य तैयार करने लगता है। आवश्यकता से अधिक बना हुआ भोज्य पदार्थ पौधे के आधार-भाग में जमा होने लगता है, और इस तरह एक नया वज्रकन्द तैयार हो जाता है। यह नया वज्रकन्द अन्त में पिछले वज्रकन्द से भी बड़ा हो जाता है, क्योंकि पिछले वज्रकन्द का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बचा हुआ भाग भी इसी में शामिल हो जाता है। इसीलिये वज्रकन्द जितने ही पुराने होते हैं, उतने ही बड़े होते जाते हैं। सूरण (जमीकन्द) तथा इस जाति के अन्य पौधों में वज्रकन्द पाये जाते हैं।

३, पत्रमयकंद (Bulb) इसमें भोज्य पदार्थों का संचय वल्कपत्रों में रहता है, और डिस्क अथवा वास्तविक तना बहुत छोटा होता है, जो वल्कपत्रों द्वारा, जो मोटे तथा मांसल होते हैं, पूर्णतः ढका रहता है। यदि प्याज को काटकर देखा जाय तो पता चलेगा कि, वल्क पत्रों तथा साधारण पत्तिओंके आधार भाग डिस्क को चारों ओर से घेरे हैं। अतः इन्हें परिवर्त्तीपत्र (Tunics) और कन्द को परिवर्त्ती पत्रमय कन्द (Tunicated bulb) कहते हैं। लिली के कन्द में मांसल वल्कपत्र एक दूसरे को केवल धारों पर ही ढके रखते हैं। पत्रमयकन्द के अन्दर की पत्तिओं के अक्षकोणों में प्रायः कलिकायें होती हैं, जो दूसरे वर्ष बढ़कर नये पौधे बनाती हैं। यहां भी कलिकाओं की वृद्धि संचित खाद्य पदार्थों पर ही निर्भर करती है। जो वल्कपत्र पहले मोटे तथा मांसल रहते हैं, भोज्य पदार्थों के खर्च हो जाने पर बहुत पतले हो जाते हैं और नवीन कन्द के ऊपर पाये जाते हैं। नये पौधे में पहले वानस्पतिक वृद्धि होती है, फिर उसमें पुष्पदण्ड, पुष्प, फल तथा बीज बनते हैं। इसके बाद वायवीय भाग सूख जाता है और कन्द जमीन के अन्दर पड़ा रहता है। जिस प्रकार वज्रकन्द

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में नवीन पौधे का खर्च से बचा हुआ भाग पुराने कन्द के अवशिष्ट पदार्थ से मिलकर नया कन्द बनाता है, उसी प्रकार प्याज जैसे पौधों में भी ये ही पदार्थ वल्कपत्रों तथा साधारण पत्तिओं के आधार भागों में संचित होकर नये पत्रमय कन्द का निर्माण करते हैं। नये कन्द में सबसे ऊपर के एक पत्रवत परदे पुराने कन्द के वल्कपत्र ही होते हैं। कन्द के बाहरी पत्तिओं के अक्षकोणोंमें भी कहीं-कहीं कलिकायें होती हैं जिससे नवीन कन्दों की संख्या अधिक हो जाती है। ये सब अलग २ होकर स्वतन्त्र पौधे बनाते हैं।

कंद—(Tuber)—यह एक भौमिक तना अथवा शाखा है, जिसकी लम्बाई में वृद्धि न होने तथा स्टार्च आदि भोज्य पदार्थों के प्रचुर मात्रा में संचित हो जाने के कारण आकार आदि में बहुत परिवर्तन हो जाता है। इसके पृष्ठपर बहुत से नत स्थान होते हैं जिन्हें आंखें (Eyes) कहते हैं और जिनमें कलिकायें होती हैं। एक आलू का पौधा जमीन से समूल खोदकर निकाल लिया जाय, और कन्द की आकृति तथा उत्पत्तिपर विचार किया जाय, तो पता चलेगा, कि पृथ्वी की सतह के बराबर पौधे में जो पत्तियां हैं, उनके अक्षकोणोंसे सूत्रवत शाखायें निकलकर जमीन के अन्दर गयी हैं और उनकी शाखाओं तथा उपशाखाओं के अग्रभाग फूल-फूलकर कन्दवत हो गये हैं। शाखाओं पर वल्कपत्र भी पाये जाते हैं। ये ही कन्द जब दूसरी साल बो दिये जाते हैं, तो इनकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कलिकायें बढ़कर नये पौधे तैयार कर लेती हैं। बहुत से पौधों में मूल भी इसी तरह कन्दवत् हो जाती है (जैसे सतावर सकरकन्द आदि)। पर, यहां मूलकंद Root tuber मूल का रूपान्तर होने से वल्कपत्र तथा कलिका से वंचित रहता है। द्विवार्षिक पौधे की जड़ें भी प्रायः मोटी तथा मांसल हो जाती हैं और सन्तानोत्पत्ति में सहायता देती हैं जैसे मूली, गाजर आदि में। शारीरिक वृद्धि के समय जो पदार्थ इन जड़ों में जमा होता है, फूल फल बनने के समय खर्च हो जाता है। इसीलिये फूल फल आने पर मूली की जड़ें प्रायः खोखली हो जाती हैं।

तने का शाखाक्रम—शाखाओं की उत्पत्ति वस्तुतः अक्षकोणीय कलिकाओं द्वारा होती है। जिस प्रकार जड़ें जल तथा खनिज लवणों की खोज में शाखाओं द्वारा अपना विस्तार करती हैं, उसी प्रकार पत्तिआं भी सूर्य प्रकाश प्राप्त करने के लिये शाखाओं की सहायता से दूर-दूर बिखरी रहती हैं। इसी अभिप्राय से तने पर शाखायें, उपशाखायें तथा टहनियां पैदा होती जाती हैं। इस तरह एक तने से अनेकों गौण तनों की उत्पत्ति होती रहती है। इन्हीं गौण तनों के निकलने के क्रम को शाखाक्रम (Branching) कहते हैं।

शाखाक्रम पार्श्वीय (Lateral) तथा द्विविभक्त (Dichotomous) होता है। जब मुख्य तना निरन्तर बढ़ता जाता है, और वृद्धिशील अग्र के नीचे पत्तिओं के अक्षकोण से क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शाखायें निकलती जाती हैं तो शाखाक्रम पार्श्वीय कहा जाता है। पुष्पवाले पौधों का यह लाक्षणिक शाखाक्रम है। एक पत्ती के अक्षकोण में प्रायः एक ही शाखा निकलती है, परन्तु कहीं-कहीं सहायक कलिकाओं से और शाखायें भी बन जाती हैं। पार्श्वीय शाखाक्रम के परिमित (Cymose अथवा Definite) और अपरिमित (Racemose अथवा Indefinite) दो भेद होते हैं। अपरिमित शाखाक्रम में प्रधान तना बराबर बढ़ता जाता है, और उससे जो शाखायें निकलती हैं वे इस प्रकार बढ़ती हैं, कि पहला तना प्रधान और उससे निकली हुई शाखायें गौण मालूम होती हैं। परिमित शाखाक्रम में पहला तना कुछ समय के बाद अपनी वृद्धि बन्द कर देता है और उसके अग्र के नीचे एक अथवा एक से अधिक शाखायें इस तरह वेग से बढ़ने लगती हैं, कि वे ही प्रधान मालूम होने लगती हैं। इन शाखाओं की वृद्धि भी परिमित होती है, और इनका स्थान उनसे निकली हुई उपशाखायें ले लेती हैं। परिमित तथा अपरिमित दोनों प्रकार के शाखाक्रमों में प्रत्येक ग्रन्थि से एक, दो अथवा दो से अधिक शाखायें निकल सकती हैं। एक निकलने पर शाखाक्रम एकान्तर (Uniparous) दो पर (Biparous) विपरीत और दो से अधिक शाखाओं के निकलने पर वर्तुल (Multiparous) कहा जाता है।

एकान्तर परिमित शाखाक्रम में शाखायें क्रमशः दायें बायें दोनों ओर निकल सकती हैं अथवा कहीं-कहीं सब एक ही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ओर निकलती जाती हैं। पहली अवस्था में शाखाक्रम Scorpioid और दूसरी अवस्थामें Helicoid (जैसे हस्तिशुण्डी) कहा जाता है। इन दोनों में शाखायें जिस तरह निकलती हैं उसी तरह यदि वे अपनी वृद्धि भी करें अर्थात् उनकी वृद्धि दिशा में कोई परिवर्तन न हो तो काल्पनिक चित्र के अनुसार उनका मुख्य तना क्रमशः टेढ़ा-मेढ़ा अथवा एक ही ओर पेचदार घूमा हुआ होगा। परन्तु वस्तुतः प्रकृति में ऐसा नहीं होता। प्रायः शाखायें सीधी होकर एक ही दिशामें ऊपर की ओर बढ़ती हैं। अतः वे सब मिलकर एक सीधे संयुक्त तने का निर्माण करती हैं जिसे संयुक्त-पादी या बहुपादी अक्ष (Sympodium) कहते हैं। यह तना एक साधारण अपरिमित शाखाक्रम के समान ही प्रतीत होता है। इन दोनों का पृथक्करण पत्तियों की स्थिति से ही किया जा सकता है। संयुक्तपादी तनों पर शाखा और पत्ती एक दूसरे के विपरीत मालूम होती हैं। क्योंकि जिन्हें हम शाखायें समझते हैं, वास्तव में वे उस स्थान की शाखा नहीं वरन् नीचे वाली शाखा के अग्रभाग हैं जिनकी वृद्धि बन्द हो गयी है।

अग्रस्थित वृद्धिशील तंतु जब दो भागों में बट जाता है और प्रत्येक से एक-एक शाखा निकलती है तो शाखाक्रम द्विविभक्त कहा जाता है। ऐसा पुष्पहीन पौधों में ही पाया जाता है। इसमें भी कहीं-कहीं दोनों शाखाओं का विकास बराबर होता है, (वास्तविक द्विविभक्त) और कहीं-कहीं दोनों छोटी बड़ी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होती हैं। प्रधान शाखा एक ही ओर होने से शाखाक्रम (Helicoid) द्विविभक्त और दोनों ओर होने से (Scorpioid) द्विविभक्त होता है, पुष्पवाले पौधों में कहीं-कहीं मिथ्या द्विविभक्त (False dichotomy) शाखाक्रम के उदाहरण मिलते हैं। परिमित द्विविभक्त में अग्रस्थित भाग जब किसी तरह नष्ट हो जाता है तो ऐसी अवस्था देखने में आती है। साधारण विपरीत परिमित शाखाक्रम में शाखा संस्थान को Dichasium विपरीत शाखा संस्थान और वर्त्तुल परिमित शाखाक्रम में शाखा संस्थान को वर्त्तुल शाखा संस्थान (Polychasium) कहते हैं।

संयुक्तोत्पत्ति (Adnation) — कहीं-कहीं शाखायें जिन पत्तिओं के अन्तकोण से निकलती हैं, उनसे कुछ दूरी तक जुटी हुई रहती हैं, जिससे शाखा तने से निकली हुई मालूम होती है, पर पत्ती स्वयं उसी शाखा से निकली हुई मालूम होती है। मकोय तथा असगन्ध आदि में पुष्पवाहक भागों में पत्तियां एकान्तर होते हुए भी इसी कारणसे विपरीत मालूम पड़ती हैं क्योंकि जिस पत्ती के अन्तकोण की वह शाखा होती है वह और उस शाखा की पहली पत्ती दोनों विपरीत मालूम होती हैं। वास्तविक अवस्था का पता इस तरह चलता है कि वे दोनों पत्तियां छोटी बड़ी होने के कारण भिन्न-भिन्न अवस्था की मालूम होती हैं। विपरीत पत्तिओं में ऐसा नहीं होता। उपर्युक्त अवस्था को संयुक्तोत्पत्ति (Adnation) कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वायवीय तने तथा शाखा के रूपान्तर—विशेष परिस्थिति में होने वाले पौधों के तने तथा शाखायें प्रायः उस परिस्थिति के अनुकूल अपना रूपान्तर कर लेती हैं जिससे कि वे पौधे का असाधारण आवश्यकताओं को पूरी कर सकें। रूप विशेष धारण करने पर ही वे विशेष प्रकार के कार्य कर सकते हैं। तनों के भिन्न-भिन्न रूपान्तर प्रायः (I) सन्तानोत्पत्ति (II) संचय (III) रक्षा तथा (IV) आरोह के भिन्न-भिन्न कार्य करते हैं।

जिन वायवीय रूपान्तरित भागों का सम्बन्ध सन्तानोत्पत्ति से है, उनमें स्वतन्त्र कलिका, रनर, आफसेट, सकर आदि की चर्चा पहले ही की जा चुकी है। संचय और सन्तानोत्पत्ति के लिये भौमिक तनों के जो रूपान्तर होते हैं, उनका भी वर्णन हो चुका है। वायुमण्डल की अत्यन्तावस्थाओं में अपनी रक्षा के लिये तथा भूखे जन्तुओं से अपने को बचाने के लिये भी तने रूपान्तरित हो जाया करते हैं। शुष्क परिस्थिति में यह आवश्यक होता है, कि पौधों में अधिक जल त्याग न हो। इसे कम करने के लिये तने प्रायः हरे और मांसल होकर पत्ती का कार्य करने लगते हैं, और आकार भी कुछ न कुछ पत्तियों का सा हो जाता है। यहां पत्तिआं भी प्रायः सभी काटों अथवा वल्कपत्रों में बदल जाती हैं। इस प्रकार के परिवर्तित तनों को फाइलोक्लेड अथवा क्लैडोड (Phylloclade अथवा cladode) कहते हैं, इसके उदाहरण नागफनी, रस्कस तथा दुग्धिका जाति के पौधों में मिलते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जन्तुओं से अपनी रक्षा करने के लिये तने कांटों में बदल जाते हैं। ऐसे कांटे पत्तिओं के अक्षकोण से निकलते हैं। किसी किसी पौधे में ऐसे भी कांटे होते हैं, जो किसी अङ्गविशेष के रूपान्तर न होकर रोमादिकों को तरह साधारण वहिरुद्भेद मात्र होते हैं। इन कांटो में रसवाहक तन्तु का अभाव होता है, जिससे पहले प्रकार के दृढ़ कण्टकों (Thorns) की अपेक्षा ये (Spines) मृदुकराटक आसानी से अलग किये जा सकते हैं। स्पर्श जनित उत्तेजना के उत्तर में बहुत से पौधे तनों तथा पत्तिओं का सूत्रवत् रूपान्तर कर लेते हैं। ये सूत्र कमजोर तनों के आरोहण में सहायता पहुंचाते हैं। सूत्र जब पत्ती का रूपान्तर होता है तो पत्तो के, और तने का रूपान्तर होता है तो तने के स्थान में पाया जाता है। पुष्पवाले पौधों में प्रायः किसी न किसी अवस्था में तने के अग्र पर अथवा शाखाओं के स्थान पर पुष्प निकलने लगते हैं। पुष्प भी शाखा का ही रूपान्तर है जो सन्तानोत्पत्ति के लिये वैसा विशेष रूप धारण करता है।

तने का पृष्ठ (Stem-surface)—यह पृष्ठ कहीं कहीं चिकना (Glabrous) होता है और कहीं २ उसपर रोम, कण्टक तथा अन्य प्रकार के वहिरुद्भेद पाये जाते हैं। वहिरुद्भेदों के अनुसार उसे रोमश (Hairy), दृढ़ कण्टकयुक्त (Thorny) अथवा मृदुकराटकयुक्त (Spiny) कहते हैं। बहुत से तनों का पृष्ठ हरा और चमकीला होता है और (Glacous)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहा जाता है। पृष्ठ के घुमाव फिराव आदि जतलाने के लिये भी वेलनाकार (Cylindrical) तथा कोणयुक्त (Angular) इन शब्दों का प्रयोग होता है। जब उनका अनुप्रस्थ विच्छेद गोला होता है तो तना वेलनाकार और कोणमय होता है, और तब कोणित कहा जाता है।

तने के कार्य—तना पत्तियों और पुष्पों के लिये स्तंभवत् कार्य करता है। उसपर पत्ती तथा पुष्प इस प्रकार निश्चित और नियमित रूप से क्रमबद्ध रहते हैं, कि वे अपना कार्य ठीक तरह से कर सकते हैं। तने की वृद्धि भी प्रायः इस तरह की होती है, कि उसपर आवश्यकतानुसार उपर्युक्त वानस्पतिक तथा सन्तानोत्पादक भाग पर्याप्त संख्या में निकलने का स्थान पाते जाते हैं। तने पर पत्तिआं इस तरह बिखरी रहती हैं, कि उनकी अधिक से अधिक संख्या सूर्य-प्रकाश को अधिक से अधिक मात्रा में प्राप्त कर सकती हैं। इसी प्रकार पुष्प भी विशेष प्रकार से क्रमबद्ध होने के कारण उन कीड़ों के लिये सुगम्य होते हैं जो उनके पराग को दूसरे पुष्पों में पहुंचाकर सन्तानोत्पत्ति कराते हैं। ठीक यही बात फल के लिये भी कही जा सकती है अर्थात् फल तथा बीज प्रसार के लिये भी तने पर वे सानुकूल स्थितिमें ही पाये जाते हैं। तने के होने से पौधे पत्तिओं और पुष्पों को अधिक संख्या में उत्पन्न करके अपने लिये प्रचुर मात्रा में भोज्य पदार्थ तैयार कराते हैं और बहुत अधिक बीज भी उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तना निर्मित तथा अनिर्मित खाद्य पदार्थों के घोल को अभीष्ट स्थानों में पहुचाने का कार्य करता है। उसकी रसवाहक नलिकाओं द्वारा पृथ्वी से शोषित किया हुआ घोल जड़ से पत्तिओं तक पहुंचता है, और पत्तिओं में जिन खाद्य पदार्थों की सृष्टि होती है, उनका घोल अन्य भागों में आवश्यकतानुसार तने की ही नलिकाओं द्वारा भेजा जाता है।

तने खाद्य पदार्थों का संचय भी करते हैं। पत्तिओं में जो पदार्थ बनते हैं, उन्हें वे संचित करके रख नहीं सकतीं। अतः वे पदार्थ अन्य भागों में चले जाते हैं, और व्यय के बाद जो अंश बचजात है, वह संचय तंतुओं में जमा हो जाता है। इन साधारण कार्यों के अतिरिक्त विशेष परिस्थितियों में रूपान्तरित होकर तने (१) सन्तानोत्पत्ति (२) संचय (३) रक्षा तथा (४) आरोहण के भिन्न-भिन्न कार्य भी करते हैं जिनका वर्णन पहले ही कर दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिच्छेद ३

पत्ती (Leaf).

पत्ती के मुख्य कार्य—पत्तियों का मुख्य कार्य पौधे के लिये भोज्य पदार्थ तैयार करने का है, जिसे वे वायुमण्डल से Co_2 और पृथ्वी से आये हुए खनिज लवणों के घोल को लेकर सूर्य प्रकाश की सहायता से बना लेती हैं। इस क्रिया के लिये पत्तिओं के हरे पदार्थ (Chlorophyll), जल, लवण घोल, Co_2 और प्रकाश आदि आवश्यक सीमास्थापक (Limiting) उपकरण हैं। इस क्रिया में पहले शर्करा तथा शर्करा श्रेणी के अन्य रासायनिक योगिक तैयार होते हैं, जो आगे चलकर भिन्न २ तरह की रासायनिक क्रियाओं में भाग लेकर उन असंख्य वानस्पतिक पदार्थों के रूप में बदल जाते हैं, जिनमें बहुतों के नाम तथा रासायनिक रचना का भी हमें पूरा ज्ञान नहीं है। Co_2 और प्रकाश पत्तिओं को बाहरी वायुमण्डल से मिल जाते हैं, और जल तथा लवणों का घोल पृथ्वी से जड़ों द्वारा शोषित होकर तनों की रसवाहक नलिकाओं द्वारा इनमें पहुंचाया जाता है। इस प्रकार जड़ से पत्तिओं तक जल की एक धारा बहा करती है, जिससे आवश्यकता से अधिक आया हुआ जल भी पत्तिओं में आ जाता है। जल के इस अनावश्यक अंश को बाहर निकालने का भार भी मुख्यतः पत्तिओं पर ही होता है। पत्तियों के पृष्ट पर बहुत सूक्ष्म छिद्र होते हैं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जिनके द्वारा पत्तियां वायुमण्डल से वायव्य-विनिमय (Gaseous Exchange) भी करती हैं और इस जल को भी वाष्प रूप में बाहर निकाला करती हैं।

उपर्युक्त भिन्न २ कार्यों को उचित रूप से पूरा करने के लिये पत्तिओं को प्रायः अपने आकार तथा क्रम में परिस्थिति के अनुसार अनेकों प्रकार के परिवर्तन करने पड़ते हैं। साधारणतः वे पतली और चिपटी होती हैं, और शाखाओं तथा टहनिओं पर इस तरह क्रमवद्ध रहती हैं, कि उन्हें इन कार्यों में एक दूसरे से वाधा पहुंचने की कम सम्भावना रहती है। परिस्थिति की भिन्नता से पत्तिओं को प्रायः अपने कार्यक्रम में भी बहुत परिवर्तन कर देने पड़ते हैं, और तदनुसार रूप-वाहुल्य भी अनिवार्य हो जाता है। आकार सम्वन्धी परिवर्तन कहीं २ पत्तिओं में बिल्कुल रूपान्तर उत्पन्न कर देते हैं, जिनकी चर्चा अन्त में की जायगी। इनके अतिरिक्त साधारण आकारवाली पत्तिओं के भी कार्य के अनुसार चार भेद होते हैं।

(१) **वीजपत्र** (Cotyledonary leaves):—बीज के अन्दर जो भ्रूण वनस्पति (Embryo plant) होती है उसमें एक, दो अथवा कहीं २ दो से भी अधिक ऐसी रचनायें होती हैं जिन्हें वीजपत्र कहते हैं। इनका आकार कहीं २ पत्रवत् (एरण्ड) होता है, परन्तु अधिकतर भोज्य पदार्थों के सञ्चय के कारण उनका आकार प्रायः चने अथवा मटर की दाल की तरह होता है, बहुत से पौधों में वीजोद्भेद के बाद यही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बीजपत्र पौधे की सर्व-प्रथम निकली हुई पत्तियों का रूप धारण करते हैं।

२ प्रामाणिक पत्ती (Foliage leaves)—साधारण आकार वाली हरी पत्तीआं जिनसे भोज्य पदार्थों का निर्माण होता है, प्रामाणिक पत्तिआं कही जाती हैं।

३ वल्कपत्र—ये भौमिक तनों पर अधिक होते हैं, ये साधारण पत्तिओं की अपेक्षा बहुत छोटे और रङ्ग में प्रायः भूरे होते हैं, ये साधारणतः पतले होते हैं, पर कहीं-कहीं जैसे प्याज में रसदार और मांसल होते हैं। साधारण पत्तिओं के पुंखपत्र (Stipule) भी प्रायः वल्कपत्रों का ही काम करते हैं जैसे बरगद में।

वल्की—कलिकाओं के वल्कपत्रों की चर्चा पहले ही की जा चुकी है।

४ पुष्प पत्र तथा वृन्तपत्र (Floral leaves & Bracts) पुष्पवाहक प्रान्त की पत्तिआं प्रायः साधारण पत्तिओं से भिन्न होती हैं। पुष्प की पत्रवत् पंखुड़िओं को छोड़कर यदि केवल पुष्पदण्ड अथवा पुष्प नाल की ही पत्तिओंपर विचार किया जाय तो मालूम होगा कि वे भी प्रायः साधारण पत्तिओं से भिन्न हैं। इसी लिये इस प्रान्त की पत्तिओं को भिन्न-भिन्न नाम दिये गये हैं। पुष्प के भिन्न-भिन्न भाग पुटपत्र, दलपत्र, पुष्पलिंग तथा पुष्प योनि कहे जाते हैं; जो पतिओं के ही रूपान्तर मात्र हैं, अतः पुष्पपत्र कहे भी जाते हैं। पुष्पदण्ड की पत्ती

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को वृन्तपत्र कहते हैं, जिनकी चर्चा पुष्प के प्रकरण में की जायगी।

पत्ती की वाह्य रचना—एक प्रामाणिक पत्ती के मुख्यतः तीन भाग होते हैं। पत्ती का वह भाग जिससे वह तने पर लगी रहती है पत्राधार (Leaf-base) कहा जाता है। पतला और चिपटा हरा भाग फलक (blade) कहा जाता है। फलक और पत्राधार के बीच के डण्ठल को पत्र-नाल (Petiole) कहते हैं। बहुत सी पत्तियां पत्रनाल रहित होने के कारण विनाल (Sessile) और बहुत सी पत्रनाल युक्त होने पर सनाल (Petiolate) कही जाती हैं। ये तीनों भाग सब पौधों में एक तरह के नहीं होते। उनके आकार आदि में बहुत भिन्नता पायी जाती है।

पत्राधार—बहुत से पौधों में पत्राधार पत्रनाल से भिन्न नहीं मालूम होता, पर बहुतों में वह मोटा होता है, और (Pulvinus) कहा जाता है, मोटा और फूला हुआ पत्राधार प्रायः गतिशील होता है। उसके अन्दर उत्तेजितत्व शक्ति से युक्त तंतुओं की एक गद्दी होती है, जिसके द्वारा पत्तिआं गति करती हैं। यही कारण है, कि बहुत से पौधों में वे वाह्य उत्तेजनाओं के हानिकारक प्रभावों से बचने के लिये गति द्वारा अपनी स्थिति बदल देती हैं। इसका बहुत स्पष्ट उदाहरण लाजवन्ती में मिलता है। बहुत से पौधों में पत्राधार कोषमय (Sheathing) भी होता है। वह चौड़ा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होकर इस प्रकार तने पर फैला रहता है, कि उससे तना अंशतः अथवा पूर्णतः ढका रहता है। ऐसे पत्राधार एक-दली पौधों में प्रायः नियमित रूप से पाये जाते हैं, जैसे केला, हल्दी, मकई, गन्ना आदि। द्विदली पौधों में भी, जैसे गर्जरादि वर्ग (धनिया, सोआ, गाजर) और अतीस वर्ग में, कोषमय आधार वाली पत्तिआं अधिक मिलती हैं।

बहुत से पौधों में पत्राधार के दोनों ओर दो छोटी-छोटी पत्रवत् रचनायें पायी जाती हैं जिनको पुंखपत्र (Stipule) कहते हैं। इन पुंखपत्रों से सम्भवतः कोई विशेष कार्य नहीं होता। पतिओं के अक्षकोण में जो कलिकायें होती हैं, उनको रक्षा करना इनके अस्तित्व का प्रयोजन हो सकता है। इनके आकार और रूप में बड़ी विषमता पायी जाती है। कहीं ये रूपान्तरित होकर बड़े महत्व के कार्य करते हैं। जैसे मटर में पत्रक सूत्रवत् हो जाने से पत्ती का मुख्य कार्य नहीं कर पाते, अतः उसके पुंखपत्र बहुत बड़े और हरे होकर पत्तिओं का कार्य करने लगते हैं। बरगद में ये नवीन कलिकाओं की रक्षा करते हैं, और कहीं-कहीं जैसे बेर और बब्बूल में काटों में रूपान्तरित होकर पशुओं से उनकी रक्षा करते हैं। चोबचीनी जाति (Smilax) के पौधों में इनका सूत्रवत् रूपान्तर हो जाता है, जिससे उनके आरोहण में ये सहायक होते हैं।

पुंखपत्रों के क्रम में भी बहुत भिन्नता देखने में आती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

साधारणतः दोनों पुंखपत्र पत्राधार के दोनों ओर एक दूसरे से अलग-अलग रहते हैं, और स्वतन्त्र (Free) कहे जाते हैं। गुलाब में पत्ती के पीछे दोनों पुंखपत्र परस्पर मिलकर पत्रनाल से भी मिल जाते हैं, इसलिये वहां उन्हें नाल लग्न (Petiolar) कहते हैं। बरगद में दोनों मिलकर पत्ती के विपरीत हो जाते हैं, और विपरीत (Opposite) कहे जाते हैं। वे जब दूसरी धारों से मिले रहते हैं तो पत्ती के अक्षकोण में दिखायी देते हैं। ऐसी अवस्था में उन्हें अक्षकोणीय कहते हैं। चक्रवर्ग (Polygonaceae) के पौधों में दोनों पुंखपत्र दोनों धारों पर एक दूसरे से मिले रहते हैं, जिससे तना उनसे चारों ओर से घिर जाता है। उनकी ऊपरी धार प्रायः कटी हुई और रोमश होती है। ऐसे पुंखपत्रों को परिकाण्ड (Ochreate) कहते हैं, और उनके मिलने से जो नलिकाकार कोष बनता है, उसे पुंखकोष (Ochrea) कहते हैं। मंजिष्ठादिवर्ग (Rubiaceae) में पत्तिआं विपरीत होती हैं, अतः प्रत्येक ग्रन्थिपर चार-चार पुंखपत्र होने चाहिये पर देखने में दो ही आते हैं। इसका यह कारण है, कि एक पत्ती का एक पुंखपत्र दूसरी पत्ती के समीप वाले पुंखपत्र से मिल जाता है, और दूसरी ओर भी शेष दोनों पुंखपत्र मिल जाते हैं, जिससे प्रत्येक ग्रन्थि पर से पत्ती और दो पुंखपत्रों का एक चक्र सा बन जाता है। इस तरह के पुंखपत्रों को अन्तर्नालीय (Interpetiolar) कहते हैं।

जब पत्राधार पंखवत् फैलकर अपनी ओर तने को घेरे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहता है तो उसे अर्धतनासक्त (Semi-amplexicaul) और यदि चारों ओर से तने को घेरे रहता है, तो उसे पूर्णतनासक्त (Amplexicaul) कहते हैं। विनाल पत्तिओं में भी कहीं-कहीं फलक के आधारीय कर्णवत् भाग तने को घेरे रहते हैं। ऐसी अवस्था में पत्ती को कर्णासक्त (Auriculate) कहते हैं। यदि वे ही कर्णवत् भाग पत्ती के विपरीत जाकर मिल जाते हैं, तो पत्ती को परिकाण्ड (Perfoliate) कहने लगते हैं। विपरीत पत्रक्रम में जब यही अवस्था दो पत्तिओं के मिलने से हो जाती है तो पत्तिओं को विपरीत परिकाण्ड (Connate) कहते हैं। जब किसी पत्ती के नीचे का, पतला, फलक का भाग कुछ दूरी तक तने के समानान्तर उससे जुड़ा हुआ रहता है तो पत्ती को काण्डलग्न (Decurrent) कहते हैं।

पत्रनाल :—पौधों के सुव्यवस्थित जीवन में कहीं २ इनका कार्य बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। पत्तिओं को प्रकाश तथा वायुमण्डल से पूर्ण लाभ पहुंचाने के लिये कहीं २ ये पत्रनाल बढ़कर इस प्रकार टेढ़े हो जाते हैं, कि आवश्यकतानुसार वे पत्तिओं की स्थिति में परिवर्तन ला देते हैं जो समयानुकूल और अभीष्ट होता है। कहीं २ सुन्दर और आकर्षक पत्रविन्यास (Leaf-mosaic) की रचना पत्रनालों की ही सहायता से की हुई रहती है। पत्रनाल का विच्छेद साधारणतः गोला होता है, पर उसका ऊपरी पृष्ठ प्रायः चौड़ा होता है, और कहीं २ उसपर नाली सी होती है, जिससे इसका अनुप्रस्थ विच्छेद

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गोलार्द्ध की तरह मालूम होता है। गेहूँ तथा इस वर्ग के पौधों में पत्रनाल कोषमय होने के कारण तने को घेरे रहता है। कोष और फलक के जोड़ पर एक सूक्ष्म झिल्ली की तरह अथवा रोमश वहिरुद्भेद होता है, जिसे पृष्ठज (Ligule) कहते हैं। तने और कोष के बीच में वायु भरी रहती है, जो ताप का कुचालक होने से ताप-जन्य हानिकारक प्रभावों से तने की रक्षा करती है। इसके अतिरिक्त पृष्ठज इस वायुपूर्ण स्थान में जल तथा कीड़ों का प्रवेश नहीं होने देता।

जल में होनेवाले पौधों में पत्रनाल प्रायः कुछ न कुछ फूला हुआ रहता है, क्योंकि उसके अन्दर वहुत से वायुपूर्ण खात (Cavities) होते हैं, जिनके कारण वे पौधे जल के ऊपर तैरा करते हैं, जैसे कुम्भी। डायनिया नामवाले कीट-भोजी (Insectivorous) पौधों में मुख्य फलक कीड़ों को पकड़ने के लिये विशेष आकार का हो जाता है. केवल उसका पत्रनाल पत्रवत् फैला रहता है। गर्म प्रदेशों के कुछ पौधों में फलक नहीं रहता, और यदि उसका कुछ विकास होता भी है, तो वह शीघ्र सूख कर गिर जाता है। ऐसी अवस्था में पत्रनाल ही पत्रवत् होकर फलक का कुछ कार्य करता है।

फलक—इसके आकार आदि में बड़ी विषमता पायी जाती है। कहीं २ तो यह साधारण अविभक्त होता है, और कहीं २ यह इतना विभक्त रहता है, कि एकही फलक कई स्वतन्त्र फलकों में बट जाता है। फलक प्रायः दो पृष्ठ का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होता है। इसमें कठोर तन्तुओं का बना हुआ एक पञ्जर (Skeleton) होता है, जो फलक के लिये अवलम्ब रूप होता है। यह पञ्जर बहुत नसों से बना रहता है, जिनसे फलक फैला हुआ और सुदृढ़ बना रहता है। इन्हीं नसों द्वारा जड़ से आया हुआ जल फलक में सर्वत्र पहुँचता है, और इन्हीं के द्वारा निर्मित खाद्य-द्रव्य पत्ती के बाहर अन्य भागों को भेजे जाते हैं। पत्तिओं के बीचोबीच प्रायः एक मुख्य नस होती है, जिससे अन्य नसें निकली रहती हैं, और जो औरों की अपेक्षा मोटी भी होती है। इसी को मध्य-पर्शुक (Midrib) कहते हैं।

नाड़ीक्रम (Venation) पत्तिओं में इन नसों के क्रम को नाड़ीक्रम कहते हैं। यह दो तरह का होता है (१) समानान्तर (Parallel) और (२) जाल नाड़ीक्रम (Reticulate) समानान्तर नाड़ी क्रम में नाड़ियां करीब-करीब समानान्तर होती है और प्रत्येक की शाखायें भी समानान्तर होती हैं। बहुपर्शुक Multicostate पत्तिओं में जिनमें प्रधान नसें एक से अधिक और आधार से अग्रतक फैली रहती हैं, आधार से अग्रतक जानेवाली नसें समानान्तर मालूम होती हैं, और एकपर्शुक unicostate पत्तिओं में भी जहां आधार से अग्रतक जाने वाली प्रधान नस एक ही होती हैं, मध्यपर्शुक से निकली हुई शाखायें परस्पर समानान्तर मालूम होती हैं। समानान्तर नाड़ीक्रम प्रायः एक-दली पौधों में पाया जाता है। जाल नाड़ीक्रम में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नाड़ियों का एक जाल सा बन जाता है। यहां भी प्रधान नाड़ियां अथवा मध्यपर्शुक से निकली हुई नसें समानान्तर मालूम होती हैं, पर उनसे निकली हुई सूक्ष्म शाखायें एक दूसरे से मिलकर जाल सदृश रचना बना लेती हैं। पत्ती को प्रकाश की दिशा में रखकर देखने से नाड़ीक्रम का ठीक-ठीक पता चलता है। जाल नाड़ीक्रम प्रायः द्विदली पौधों में पाया जाता है, पर कहीं-कहीं एक दली पौधों में भी इस क्रमकी पत्तिआं देखने में आती हैं, जैसे स्माइलेक्स जाति के पौधों में।

पत्रनाल फलक में आकर दो तरह से विभक्त होता है। कहीं-कहीं तो यह पत्ती के अग्रतक मध्यपर्शुक के रूप में बढ़ा हुआ होता है, और उसके दोनों ओर से शाखायें निकल कर फ़लक में फैली रहती हैं। इस प्रकार के नाड़ीक्रम को पत्ता-कार अथवा एक पर्शुक कहते हैं। परन्तु यदि पत्रनाल फलक के आधार पर ही कई मुख्य नाड़ियों में विभक्त हो जाता है, जो आधार से अग्रतक फैली रहती हैं, तो नाड़ीक्रम करतलाकार (Palmate) अथवा बहुपर्शुक कहा जाता है। फलक के विभक्त होने की विधि नाड़ीक्रम पर ही निर्भर करती है।

साधारण तथा संयुक्त पत्ती :—जब तक फलक एक हो चाहे वह बहुविभक्त होकर कई भागों में क्यों न बट गया हो, तबतक पत्ती को साधारण (Simple) कहते हैं। इनमें कुछ ऐसी होती हैं, जिनकी धार कुछ भी कटी हुई नहीं रहती, और कुछ ऐसी होती हैं जिनकी धार पर छोटे-छोटे दांत पाये जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इनके अतिरिक्त बहुत सी साधारण पत्तिओं के स्पष्ट विभाग हो गये रहते हैं। वे विभाग या विच्छेद (Lobe) कहीं-कहीं अधिक से अधिक धार और मध्यपर्शुक अथवा धार और पत्रनाल के बीच तक एक दूसरे से अलग होते हैं। ऐसी अवस्था में पत्ती को Fid और फलक के भागों को Cleft कहते हैं। यदि कटाव आधे से कुछ अधिक दूरी तक हो, तो फलक के भागों को Segment और पत्ती को Sect कहते हैं। कहीं-कहीं यह कटाव मध्य पर्शुक अथवा पत्रनाल के समीप तक पहुंचा हुआ रहता है, और तब विच्छेदों को Partitions और पत्ती को Partite कहते हैं पत्ती को वस्तुतः उपर्युक्त अवस्थाओं में नाड़ीक्रम के अनुसार Pinnatifid, Pinnatisect Pinnatipartite तथा Palmatifid, Palmatisect और Palmati-partite कहते हैं। यदि Pinnati-partite तथा Palmati-partite साधारण पत्तिओं के कटाव और अधिक बढ़कर मध्यपर्शुक अथवा पत्रनाल तक पहुंच गये हों और उनके विच्छेद एक दूसरे से अलग और स्वतन्त्र हो गये हों तो पत्ती संयुक्त Compound कही जायगी। इसके प्रत्येक स्वतन्त्र विच्छेद को तब पत्रक Leaflet कहने लगते हैं।

Pinnati partite साधारण पत्ती से पत्राकार (Pinnate) संयुक्त पत्ती का और Palmati partite पत्ती से करतलाकार Palmate संयुक्त पत्ती का विकास होता है। पत्राकार संयुक्त पत्ती में पत्रक मध्यपर्शुक अथवा पत्रदण्ड के दोनों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ओर एकान्तर अथवा विपरीत क्रम में पाये जाते हैं। प्रधान तरह एक पत्ती से अनेकों पत्रक बन जाते हैं, उसी प्रकार एक पत्रक कहीं-कहीं फिर कई उपपत्रकों में विभक्त हो जाता है। ऐसी अवस्था में पत्ती द्विपक्षाकार संयुक्त कही जाती है यही क्रिया तीसरी बार भी हुई हो, तो पत्ती त्रिपक्षाकार (Tripinnate) संयुक्त हो जाती है। इससे भी अधिक होने पर पत्ती को बहु पक्षाकार Decompound कहते हैं। पक्षाकार संयुक्त पत्ती में पत्रकों की संख्या सम हो, और पत्रदण्ड के अग्रपर कोई अकेला पत्रक न हो तो पत्ती को समसंख्यक पक्षाकार Paripinnate कहते हैं. और यदि पत्रकों की संख्या विषम हो अर्थात् पत्रदण्ड के अग्रपर एक अकेला पत्रक भी हो, तो पत्ती को विषम संख्यक पक्षाकार Impari pinnate कहते हैं। करतलाकार संयुक्त पत्ती को भी पत्रकों की संख्या के अनुसार द्विपत्रक Binate त्रिपत्रक Trifoliate अथवा Ternate आदि विशेषण देते हैं।

संयुक्त पत्ती तथा एक शाखा में अन्तरः— संयुक्त पत्तिआं, विशेषकर पक्षाकार संयुक्त पत्तिआं एक साधारण शाखा की तरह मालूम होती हैं, इसलिये प्रारम्भ में प्रायः भ्रम हो जाता है। परन्तु यदि इन बातों पर ध्यान रखा जाय, कि (१) पत्ती के अक्षकोण में शाखा अथवा कलिका होती है (२) पत्ती के अन्तिम वा अग्र भाग पर तथा पत्रकों के अक्षकोण में कलिकायें नहीं होतीं (३) शाखा के अग्र पर प्रायः कलिका

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होती है और शाखा स्वयं पत्ती के अक्षकोण से निकलती है, तो संयुक्त पत्ती और शाखा में कदापि भ्रम न होगा। इनके अतिरिक्त पुंखपत्र, कोषमय पत्राधार तथा स्थूल पत्राधारों की स्थिति देखकर भी यह भ्रम मिटाया जा सकता है, क्योंकि, ये रचनायें प्रायः पत्ती के ही आधार पर होती हैं पत्रक के नहीं।

पत्तिओं का विवरण :— किसी पत्ती का पूर्ण परिचय कराने के लिये उसके आकार, नाड़ीक्रम, धार का घुमाव तथा उसकी बनावट, आधार, अग्र, पृष्ठ, मोटाई, रंग, गठन, उसके वहिरुद्भेद, गन्ध तथा स्वाद आदि सभी बातों को देखा जाता है। इस तरह भिन्न २ दृष्टि से यदि पत्ती की परीक्षा की जाय, तो वनस्पति निर्णय में बहुत सहायता मिलती है। अतः अब हम उन पर अलग २ विचार करेंगे।

पत्ती का आकार :— भिन्न २ आकार की पत्तिआं चार शीर्षकों के अन्दर लायी जा सकती हैं :—

(अ) आधार की ओर अधिक और अग्र की ओर कम चौड़ी

(१) लट्वाकार (Ovate) आधार पर गोली और सबसे अधिक चौड़ी, अग्र की ओर क्रमशः पतली।

(२) ताम्बूलाकार (Cordate) अग्रपर नोकीली, आधार पर सबसे अधिक चौड़ी और पत्रनाल के जोड़ पर भीतर की ओर धंसी हुई।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(३) **पुंखाकार** (Sagittate) अग्र की ओर कुछ न कुछ नोकीली, आधार पर चौड़ी और भीतर धंसी हुई, आधार पर दोनों ओर के विच्छेद पत्रनाल की ओर बढ़े हुए।

(४) **Hastate**—पुंखाकार को तरह, परन्तु आधारीय विच्छेद बाहर को ओर बढ़े हुए।

(५) **वृक्काकार** (Reniform) वृक्क के आकार की, अर्थात् अग्रपर गोली, पार्श्वों में लम्बी और आधार पर भीतर की ओर धंसी हुई।

(६) **अर्धचन्द्राकार**—वृक्काकार पर आधारीय भाग नोकीले।

(ब) आधार पर नोकीली और अग्र पर चौड़ी

(१) **व्यस्त लट्वाकार** (Ob-ovate अ (१) का उलटा हुआ आकार जिनमें हो।

(२) **व्यस्त ताम्बूलाकार** अ (२) का उलटा हुआ आकार जिनमें हो।

(३) **Spathulate** अग्रपर चौड़ी और गोली, आधार पर क्रमशः नोकीली।

(स) गोली और विषमाकार

(१) **वृत्ताकार** अथवा गोली पत्तियां।

(२) **विषमाकार** अथवा मध्यपर्शुक के एक ओर का भाग बड़ा और दूसरी ओर का छोटा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(द) अन्य आकार की पत्तियां

(१) Subulate—यदि फलक लम्बा और कम चौड़ा हो, और आधार से अग्रतक क्रमशः कम चौड़ा होता हुआ अग्रपर नोकीला हो गया हो।

(२) Linear रेखाकार—यदि फलक लम्बा और कम चौड़ा हो, परन्तु आधार से अग्रतक उसकी चौड़ाई एक हो अर्थात् उसकी दोनों धारें समानान्तर हों।

(३) Acicular सूच्याकार-यदि रेखाकार पत्ती का अग्र तीक्ष्ण और नोकीला हो।

(४) भालाकार (Lanceolate)—यदि फलक बीच में सबसे अधिक चौड़ा हो, लम्बाई चौड़ाई से बहुत अधिक हो और अग्र तथा आधार की ओर क्रमशः पतला होता गया हो।

(५) अण्डाकार Elliptical—यदि फलक लम्बाई में चौड़ाई से कुछ अधिक हो बीच में सबसे अधिक चौड़ा और दोनों ओर क्रमशः पतला होकर कुछ न कुछ नोकीला हो गया हो।

(६) आयताकार-यदि फलक आयत (Rectangle) की तरह हो।

(७) Lyrate—जब एकपक्षुक पत्ती इस प्रकार कटी हुई हो कि उसका अग्रस्थित विच्छेद सबसे बड़ा और करीब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करीब गोला हो, और शेष नीचे के विच्छेद क्रमशः छोटे होते गये हों।

कहीं-कहीं पत्तिओं के आकार का ठीक-ठीक ज्ञान उपर्युक्त किसी एक शब्द से नहीं हो पाता, तो संयुक्त विशेषणों, जैसे लट्वाकार-भालाकार, ताम्बूलाकार-लट्वाकार आदि का प्रयोग करना पड़ता है।

पत्ती का अग्र (Apex) पत्तिओं के अग्र भी कई तरह के होते हैं। (१) **तीक्ष्णाग्र** (Acute) जब पत्ती की दोनों धारें अग्र पर मिलकर छोटा न्यूनकोण बनावें, जिससे अग्र नोकीला मालूम हो (२) **लम्बाग्र** (Acuminate) यदि तीक्ष्णाग्र पीपल के पत्राग्र की तरह बहुत लम्बा हो (३) **कुण्ठिताग्र** Obtuse यदि अग्र नोकीला न होकर गोला हो (४) **नताग्र** (Emarginate) जब कुंठिताग्रपर धार कुछ भीतर की ओर दबी हुई हो (५) **रोमश कुंठिताग्र** (Mucronate) यदि कुंठिताग्र पर एक सूक्ष्म रोम पाया जाय (६) **च्छिन्नाग्र** (Truncate) यदि देखने से ऐसा मालूम हो कि उसका अग्रभाग काट दिया गया है।

पत्ती की धार :—धार जब बिलकुल कटी हुई न हो तो उसे पूर्ण धार (Entire) कहते हैं, परन्तु जब धार पर दांत के आकार की रचनायें मौजूद हों तो उसे दन्तमय धार कहते हैं। विच्छेदमय धार की पत्तिओं का वर्णन पहले ही किया जा चुका है। दन्तमय धार कई तरह की होती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(१) Serrate जब छोटे और नोकीले दांत आरी के दांतों की तरह आगे की ओर हों (२) Retroserrate यदि वे ही दांत पीछे अथवा आधार की ओर हों (३) Dentate यदि दांत नोकीले और बाहर को ओर हों (४) Crenate जब दांत गोले हों (५) Spiny यदि कांटों की तरह हों (६) Wavy अर्थात् लहरी, यदि धार लहर की तरह टेढ़ीमेढ़ी बनी हो।

पत्ती का गठन (Texture) पत्ती का गठन परिस्थिति पर निर्भर करता है और उसकी स्थिरता (Duration) और गठन में भी बहुत निकट सम्बन्ध है। छायाप्रिय पौधों में पत्तिओं के बाह्य चर्म का बहुत कम विकास होता है। प्रकाश-प्रिय पौधों में पत्तियां पतली होती हैं, पर उनके पृष्ठ पर क्यूटि-किल (Cuticle) नाम की एक तह होती है, जिसके कारण पत्तिआं बहुत शुष्क अवस्थाओं में अपनी रक्षा कर लेती हैं। ये पत्तियां पतली और शुष्क (Scarious) अथवा चर्मवत् चिकनी (Leathery) होती हैं। बहुत ही शुष्क और जल हीन वातावरण में अधिक जल-त्याग से पत्तिओं के नष्ट होने का डर रहता है। ऐसी अवस्था में पत्तियां प्रायः मांसल और रसदार होती हैं, जिनमें जल-त्याग भी कम होता है, और जल संचयार्थ तंतु भी रहते हैं।

पत्ती का पृष्ठ—यह भी कई प्रकार का होता है। पृष्ठ या तो चिकना (Glabrous) या चिकना और चमकदार (Glaucous) होता है। इसके अतिरिक्त वे भिन्न-भिन्न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकार के रोमों से भी ढके रहते हैं। रोमश (Hairy) पत्तिआं मृदुरोमश (Pubescent) कही जाती हैं, यदि रोम छोटे और मुलायम हों। परन्तु यदि वे रुई के सदृश हों तो पत्तिआं तूल रोमश (Tomentose) कही जाती हैं। इनके अतिरिक्त पत्ती मृदुकंटकाकीर्ण अथवा कंटकाकीर्ण (Prickly) भी हो सकती हैं।

पत्ती का रंग — यद्यपि पत्तियां साधारणतः हरी होती हैं, तो भी समय-समय पर उनमें दूसरे रङ्ग भी प्रकट हुआ करते हैं। पौधों में मुख्य वर्णोत्पादक द्रव्य तीन ही तरह के होते हैं, जिनसे पीला, हरा और लाल रङ्ग पैदा होता है। इनके अतिरिक्त उनमें एन्थोसायनिन नाम के वर्णोत्पादक पदार्थ भी होते हैं, जो पतझड़ के समय अथवा इसी तरह के अन्य अवसरों पर तरह-तरह के रंग लाते रहते हैं। कहीं-कहीं एक ही पत्ती के भिन्न-भिन्न भागों में भिन्न-भिन्न प्रकार के रंग होते हैं, जैसे क्रोटन में कुछ भाग हरा होता है और कुछ सफेद। ऐसी पत्तियों को चित्रित (Variegated) कहते हैं।

पत्रक्रम (Phyllotaxis) पत्तिआं तनों पर प्रायः निश्चित क्रम में निकली हुई रहती हैं। अदि ऐसा न हो और वे पर्वों पर विना किसी नियम के जिस ओर चाहें निकलें, तो इसका परिणाम उनके लिये बहुत भयंकर हो सकता है। उनमें कितनी ही ऐसी होंगी, जिनसे सूर्य-प्रकाश की भेंट भी न होगी। जब हम देखते हैं कि कद्दू तथा उसी तरह के अन्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विसर्पी पौधों में शाखाग्र किस प्रकार ऊपर उठा रहता है, कुमुदनी आदि की पत्तिआं कैसे पानी की सतह पर तैरा करती हैं; अंगूर आदि को लतायें मकानों पर फैली हुई कैसे सुन्दर पत्र-विन्यासों से युक्त रहती हैं, तो हमें यही कहना पड़ता है कि भिन्न-भिन्न पत्रक्रमों का यही अभिप्राय है, कि पत्तिओं को प्रकाश की यथा सम्भव कमी न पड़ने पावे और वे इस क्रम से हों कि प्रकाश प्राप्त करने में वे परस्पर वाधा न उपस्थित करें।

कुछ पौधों में वायवीय तना प्रायः नहीं के बराबर होता है। वहां सब पत्तिआँ जड़ के ऊपरी सिरे से निकली हुई मालूम होती हैं। ऐसी पत्तिओं को मूलीय (Radical) कहते हैं। पत्तिआं अधिकतर वायवीय तनों के पर्वों पर अलग-अलग निकलती हैं। ऐसी पत्तिओं को काण्डपत्र Cauline leaf कहते हैं। इनके क्रम में बड़ी भिन्नता होती है। यदि प्रत्येक ग्रन्थि पर एक-एक पत्ती हो तो पत्रक्रम एकान्तर Spiral दो-दो हों तो विपरीत (Opposite) और दो से अधिक हों तो चाक्रिक (Veriticillate) कहा जाता है। विपरीत पत्रक्रम भी दो तरह का होता है। यदि एक ग्रन्थि पर की दोनों पत्तिआं ऊपर और नीचे की ग्रन्थियों की पत्तिओं के ठीक नीचे ऊपर हों तो उसक्रम को Super-posed कहते हैं। परन्तु यदि एक ग्रन्थि की पत्तिआं ऊपरवाली तीसरी ग्रन्थि के पत्तिओं के नीचे हों, और दूसरी ग्रन्थि की पत्तिआं दूसरी दिशाओं में निकली हों तो पत्रक्रम Decussate कहा जाता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हम कह सकते हैं कि पत्रक्रम दो ही तरह का होता है (१) चाक्रिक और (२) पेचदार। चाक्रिक-क्रम में विपरीत क्रम भी सम्मिलित किया जा सकता है। पेचदार क्रम में पत्तियों को एकान्तर कहते हैं। यद्यपि पेचदार क्रम में प्रत्येक ग्रन्थि पर पत्तिओं का चक्र नहीं होता, तो भी विचार करने से मालूम होगा कि यहां भी वह चक्र होता है, परन्तु दो से अधिक पर्वों में समाप्त होता है। यदि पत्राधारों को मिलाता हुआ एक सूत्र तने के चारों ओर लपेट दिया जाय और उसी के साथ तने पर एक रेखा खींच दी जाय तो मालूम होगा कि वह चक्र २, ३ अथवा इससे अधिक पत्तिओं के बाद पूरा होता है। इस काल्पनिक रेखा को Genetic spiral कहते हैं। इस पर की दो समीपवर्ती पत्तिओं के बीच की दूरीको Divergence कहते हैं। सीधी खड़ी रेखायें जो पत्रधारों को मिलाती हैं Orthostiches कही जाती हैं।

दो निकटवर्ती पत्तिओं के बीच की खड़ी रेखा जब दो पर्वों में समाप्त होती है, तो पत्रक्रम को द्विपर्वी चाक्रिक पत्रक्रम कहते हैं। इस क्रम में पत्तिआं तने के केवल दो ही तरफ निकलती हैं। इसमें पेचदार रेखा पर की दो निकटवर्ती पत्तिओं के बीच केवल आधा चक्र समाप्त होता है, इसलिये Divergence कोण $\frac{१}{२} \times ३६०$ का होता है। यह क्रम प्रायः गोधूमवर्ग के तथा अन्य एकदली पौधों में पाया जाता है। दूसरा पत्र क्रम त्रिपर्वी चाक्रिक है, जिसमें चक्र तीन पर्वों में समाप्त होता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इसमें D कोण $\frac{१}{३} \times ३६०$ का होता है। यह भी एक दली पौधों में अधिक पाया जाता है। पंचपर्वी चाक्रिक-क्रम में दो चक्र पांच पर्वों में समाप्त होते हैं; इसमें D कोण $\frac{२}{५} \times ३६०$ का होता है। यदि उपर्युक्त प्रकार के D कोणों के भिन्नों को क्रमवार लिखें तो वे इस प्रकार होंगे:- $\frac{१}{२}, \frac{१}{३}, \frac{२}{५}, \frac{३}{८}, \frac{५}{१३}, \frac{८}{२१}$ इत्यादि। इन भिन्नों में पारस्परिक सम्बन्ध भी है। किसी एक बीच वाले भिन्न को ऊपरी संख्या उसके पहले के दो भिन्नों की ऊपरी संख्याओं के जोड़ के बराबर है। यही बात नीचे की संख्याओं में भी है। $\frac{५}{१३}$ और $\frac{८}{२१}$ के पत्रक्रम भी कहीं-कहीं पाये जाते हैं, परन्तु बहुत कम। यहां हमें दो बातों का ध्यान रखना चाहिये, एक यह कि कहीं-कहीं आकस्मिक कारणों से इन पत्रक्रमों में बाधा पड़ जाती है, और दूसरी यह कि कहीं-कहीं चक्रों के पूरा होने पर पेचदार रेखा का रुख बदल कर उल्टा हो जाता है अर्थात् पहले वह दाईं ओर चलती है, तो बाईं ओर और बाईं ओर से दाईं ओर को चलने लगती है।

पत्ती के रूपान्तर:—खाद्यपदार्थों का निर्माण, जल-त्याग, श्वसन तथा वृद्धि आदि कार्यों के अतिरिक्त असाधारण अवस्थाओं तथा विशेष परिस्थितिओं में पत्तिओं को अन्य कार्य भी करने पड़ते हैं। ये कार्य परिस्थिति के अनुसार भिन्न २

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हो सकते हैं जैसे रक्षा, उत्पादन, आरोहण, खाद्यपदार्थों तथा जल का सञ्चय, तथा भोजनार्थ कीड़ों के पकड़ने के कार्य भी कभी २ इनको करने पड़ते हैं। अतः इन कार्यों के अनुकूल उन्हें अपना रूपान्तर भी करना पड़ता है।

(१) रक्षा—ताप की हानिकारक चरम अवस्थाओं से बचने के लिये पत्तिआं भिन्न २ प्रकार के वल्कपत्रों में बदल जाती हैं, जो प्रायः छोटी, रंग में भूरी तथा गठन में न्यूनाधिक दृढ़ और रोमाच्छादित हो जाती हैं। कभीं २ कलिकाओं के अन्दर से गोंद की तरह निर्यास भी निकलते हैं, जिससे उनके अन्दर पानी नहीं प्रवेश करने पाता। कलिकाओं के वल्कपत्र रचना और उत्पत्ति की समानता से पत्तिओं के ही रूपान्तर माने जाते हैं। पत्तिआं जन्तुओं से अपनी रक्षा करने के लिये कांटों में भी बदल जाती हैं। ये कांटे सम्पूर्ण पत्ती अथवा उनके अंश मात्र के रुपान्तर होते हैं। इसका निर्णय उनका स्थान देखकर ही किया जा सकता है। पत्तिओं का कण्टकवत रूपान्तर प्रायः मरुभूमि के पौधों में पाया जाता है। वहां जल की कमी रहती है, जिससे पत्तिओं के अभाव में जल-त्याग भी कम होता है, और कांटों की डर से चरनेवाले जानवर उन्हें खाते भी नहीं।

(२) उत्पादन—पुष्पों में पंखुड़ियां तथा उनके अन्दर के नर और नारी भाग पत्तिओं के ही रूपान्तर होते हैं जो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सन्तानोत्पादन में सहायक होने के कारण विशेष रूप धारण किये रहते हैं।

(३) **आरोहण** बहुत से आरोही पौधों की पत्तिआं पूर्णतः अथवा अंशतः सूत्रों (Tendril) में बदल जाती हैं, जिनकी सहायता से वे पौधे अन्य पौधों वा दूसरी वस्तुओं पर चढ़ते हैं। उद्यान मटर में संयुक्त पत्ती के कुछ पत्रक सूत्रवत होते हैं। पोरैंटो वाइन और टोपिओलम में पत्रनाल ही सूत्रवत् होता है। आरोही पौधों के सूत्र अन्य अङ्गों के भी रूपान्तर होते हैं जैसे मोरवेल जाति में पत्रनाल, चोब चीनी में पुंखपत्र, और हड़जोड़ में तना ही सूत्रवत् होता है।

(४) **खाद्य पदार्थों का संचय** कुछ पौधों में, विशेषतः एक-दली पौधों में वल्क पत्र (Tulip), साधारण पत्ती के आधारीय भाग (गन्ना), तथा प्याज के वल्कपत्र खाद्य पदार्थों का संचय करते हैं।

(५) **जल संचयः**—शुष्क भूमि में पौधों को सर्वदा पर्याप्त मात्रा में जल नहीं मिलता। नम ज़मीन में भी जहां लवणों का आधिक्य होता है, पौधे जल रहते हुए भी उसे ग्रहण नहीं कर सकते। ऐसे पौधों में पत्तिआं प्रायः जल का संचय करती हैं। इन पत्तिओं का वाह्यचर्म मोटा होता है, जिससे जल त्याग कम होता है, और इनके अन्दर जल संचय करने वाले विशेष तंतु भी होते हैं। जब जल पर्याप्त मात्रा में मिलता है, तो ऐसे पौधे उसका अपनी पत्तिओं में संचय कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लेते हैं, जिससे वे यदि ज़मीन से अलग भी हो जाते हैं, तो बहुत दिनों तक इस संचित जल पर अपना निर्वाह कर लेते हैं।

(६) भोजनार्थ कीड़ों को पकड़ना :—वनस्पतिओं में भी कुछ मांसाहारी वनस्पतिआं होती हैं, जो वानस्पतिक पदार्थों के अभाव में जन्तुओं पर अपना जीवन बिताती हैं। इन पौधों की पत्तिओं में बहुत विलक्षण रूपान्तर देखा जाता है, जिसकी सहायता से वे छोटे २ कीड़ों को पकड़ कर बन्दी बना लेती हैं, और उनका रस चूस कर अपना काम चलाती हैं। इन पौधों में जड़ का बहुत कम विकास होता है, और ये प्रायः नम ज़मीन में जहां लवणों की न्यूनता और सड़ी गली वनस्पतिओं की अधिकता होती है, पाये जाते हैं। ड्रोसेरा, नेपेन्थीज़, ब्लैडरवर्ट तथा डायनिया आदि ऐसे मांसाहारी पौधे हैं, जिनकी पत्तिआं कीड़ों को पकड़ लेने पर पात्रवत् बन्द हो जाती हैं।

अन्य अंगों का पत्रवत् कार्य तथा रूपान्तर :—जिन पौधों में प्रामाणिक पत्तिआं नहीं होतीं अथवा अगर होती भी हैं तो छोटी और अस्थायी होती हैं, उनमें पत्तिओं का कार्य अन्य अङ्गों द्वारा होता है। नागफनी के पत्रवत् तने तथा रास्नाजाति में पत्रवत् कार्य करनेवाली जड़ों की चर्चा पहले ही की जा चुकी है। शतावर जाति के पौधों में वास्तविक पत्तिआं छोटी और वल्कवत् होती हैं पर उनकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अन्तकोणीय शाखायें पत्रवत् कार्य करती हैं। आस्ट्रेलिया के बब्बूल जाति के कुछ पौधों में फलक नहीं होता। उनका पत्रनाल फैलकर पत्रवत् हो जाता है, और फलक के अभाव की अंशतः पूर्त्ति करता है। इन पौधों के जीवन काल में साधारण और रूपान्तरित दोनों तरह की पत्तिआं निकलती हैं। प्रारम्भ में निकली हुई पत्तिआं सामान्य संयुक्त पत्तिओं की तरह होती हैं, परन्तु बाद में निकलने वाली पत्तिओं में क्रमशः रूपान्तर प्रकट होने लगता है। अन्त में सभी पत्तिआं पूर्णतः रूपान्तरित होकर ही निकलती हैं। ऐसी रूपान्तरित पत्ती को Phyllode कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिच्छेद ४

पुष्प व्यूह (Inflorescence)

पौधे के पुष्पवाहक भाग प्रायः शेष वानस्पतिक भाग से भिन्न होते हैं। इस भाग की पत्तिओं में भी कुछ ऐसे परिवर्तन हो जाते हैं, जिससे उन दोनों की असमानता और भी बढ़ जाती है। इसीलिये उनके पुष्पवाहक भाग को पुष्प-व्यूह कहते हैं। चूंकि पुष्प एक परिवर्तित शाखा है, इसलिये पुष्पों के निकलने का वही क्रम होता है, जो शाखाओं का। पुष्प-व्यूह के भिन्न-भिन्न प्रकार पुष्पक्रम के अनुसार होते हैं, इसी लिये उनके लिये प्रायः उन्हीं शब्दों का उन्हीं अर्थों में प्रयोग किया जाता है, जिनका कि शाखाक्रम के लिये पहले ही किया जा चुका है।

बहुत से पौधों में केवल एक ही पुष्प होता है, जो मुख्य अक्ष के अग्रपर निकलता है। ऐसे पुष्प को एकाकी तथा अन्तिम (Solitary terminal) कहते हैं। अन्य बहुत से ऐसे पौधे होते हैं, जिनमें पुष्प तो अधिक होते हैं पर वे साधारण पत्तिओं के अक्षकोण से निकलते हैं, और एक पत्ती एक ही पुष्प अपने अक्षकोण में धारण करती है। ऐसे पुष्प एकाकी तथा अक्षकोणीय (Solitary axillary) कहे जाते हैं। इन दोनों प्रकार के पुष्पों के डंठलों को पुष्पदण्डिका (peduncle) कहते हैं। जब पुष्पवाहक अक्ष बहुत लम्बा होता है, और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उसके पार्श्व से विनाल पुष्प अथवा पुष्पवाहक शाखायें निकली रहती हैं तो सम्पूर्ण अक्ष को पुष्पदण्ड (Rachis अथवा Peduncle) कहते हैं। पुष्पदण्ड इससे भी अधिक शाखा युक्त होनेपर पुष्पदण्ड ही कहा जाता है, केवल उसके अन्तिम भाग को जो एक-एक पुष्प धारण करता है; पुष्पनाल (Pedicel) कहते हैं। पुष्प दण्ड इस तरह प्राथमिक (Primary) द्वैतीयक (Secondary) अथवा त्रैतीयक (Tertiary) कहा जा सकता है। पुष्पदण्डिका का ऊपरी सिरा जिससे पुष्प जुड़े रहते हैं, स्तम्भक (Receptacle) कहा जाता है, यह समतल, शंकाकार, नतोदर अथवा कहीं-कहीं गोल घड़े के आकार का होता है। कुछ पौधों में वायवीय तना न होने के कारण पुष्पदण्ड ज़मीन के अन्दर से निकला हुआ मालूम होता है। यह प्रायः निःशाख तथा पत्र रहित भी होता है। ऐसे पुष्पदण्ड को पुष्प-ध्वज (Scape) कहते हैं। यह घृतकुमारी, सुदर्शन तथा प्याज में पाया जाता है।

पुष्प पत्रों के अतिरिक्त पुष्पदण्ड की सब पत्तिओं को वृन्तपत्र (Bract) कहते हैं। परन्तु अधिकतर यह नाम प्रायः उन्हीं पत्तिओं को दिया जाता है, जिनके अक्षकोण से एक पुष्प या एक पुष्पवाहक अक्ष निकलता है। पुष्पनालों पर पायी जानेवाली पत्तिओं को वृन्त पत्रक (Bracteole) कहते हैं। वृन्त पत्र प्रायः आकार, रंग, गठन, स्थिरता, विस्तार तथा क्रम में बहुत भिन्न २ प्रकार के होते हैं। इन्हीं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बातों में कभी-कभी बहुत विलक्षण हो जाने के कारण उन्हें तथा उनके समूहों को, Scale, Involucre, Involsucel, Cupule, Spathe, Palela, Glume आदि नामों से पुकारने की आवश्यकता पड़ती है। इनकी व्याख्या पुष्प व्यूह के भेदों के साथ की जायगी।

पुष्प व्यूह के भेद—यह दो तरह का होता है (१) अपरिमित (२) परिमित। अपरिमित पुष्पव्यूह (Racemose) में पुष्पदण्ड निरन्तर बढ़ता जाता है और उसपर पत्तिआं तथा उनके अक्षकोणों में पुष्प वा गौण पुष्प-दण्ड निकलते जाते हैं। परमित पुष्प व्यूह में कुछ समय के बाद पुष्प-दण्ड के अग्रपर पुष्प आ जाता है और उसकी वृद्धि बन्द हो जाती है। नीचे से दूसरे पुष्प दण्ड निकलकर उसका स्थान ले लेते हैं पर उनकी भी कुछ समय के बाद वही हालत होती है। पहले में जब पुष्प-दण्ड लम्बा होता है तो नये पुष्प अग्रकी ओर होते हैं, और जब पुष्प दण्ड की अनुप्रस्थ-वृद्धि के कारण पुष्प गुच्छों में पाये जाते हैं, तो नये पुष्प उस पुष्प गुच्छ के केन्द्रकी ओर होते हैं। परिमित पुष्पव्यूहों में नये पुष्प उपरोक्त अवस्थाओं में क्रमशः पुष्प दण्ड के आधार की ओर अथवा पुष्प गुच्छ के बाहरी भाग में पाये जाते हैं। जहां पुष्पों के सघन समुदाय होते हैं, वहां इसी तरह पुष्पव्यूह का निर्णय होता है।

अपरिमित पुष्पव्यूह :—इसके निम्नलिखित भेद होते हैं-

(१) सदण्डक (Raceme) यदि पुष्पदण्ड लम्बा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हो, पार्श्वीय-पुष्प सनाल हों, और उनके पुष्पनाल लम्बाई में समान हों।

(२) **समशिख** (Corymb)—यह (१) का ही एक विशेष भेद है। इसमें केवल यही विशेषता होती है, कि पुष्पनाल प्रायः लम्बाई में बराबर नहीं होते, बल्कि नीचे के पुष्पों के बड़े और ऊपर के पुष्पों के छोटे पुष्पनाल होते हैं, जिससे सब पुष्पों के शिखर एक ही सतह में होते हैं। उपर्युक्त दोनों प्रकार के पुष्पव्यूह सर्षपवर्ग के पौधों में पाये जाते हैं। कहीं २ ऐसा भी देखा जाता है कि सदण्डिक पुष्पव्यूह के पुष्पनाल बड़े होकर बाद में समशिख पुष्पव्यूह के से हो जाते हैं।

(३) **विदण्डिक** (Spike)– सदण्डिक से यह केवल इसी बात में भिन्न होता है, कि इसमें पुष्पनाल नहीं होते। इसके भी कुछ विशेष भेद होते हैं, जैसे शाहबलूत (Chest-nut) तथा सनोवर (Birch) में पुष्पव्यूह लम्बा, नीचे की ओर लटका हुआ तथा स्वल्पकालिक होता है, और उसके पुष्प एक-लिंगी (unisexual) होते हैं। इस प्रकार के पुष्पव्यूह को लम्बित (Catkin) कहते हैं। इसका दूसरा भेद **मांसल विदण्डिक** (Spadix) कहा जाता है। इसमें पुष्प बहुत छोटे तथा एक-लिंगी होते हैं। प्रत्येक पुष्प के साथ वृन्तपत्र नहीं होता, पर सम्पूर्ण पुष्पव्यूह एक रंगीन पत्रवत रचना से घिरा रहता है, जिसे Spathe कहते हैं। पुष्पदण्ड में नीचे आधार की ओर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नारी पुष्प और ऊपर नर पुष्प होते हैं। इसके उदाहरण खजूर, नारियल तथा सूरण आदि के पुष्पव्यूह हैं।

(४) सचूड़ (Umbel)—यहां पुष्प सब सनाल होते हैं, पर लघ्वीकृत अक्ष में पर्वों के लोप हो जाने से सब पुष्प एक ही स्थान से निकलते हैं। गर्जरादि वर्ग का यह लाक्षणिक पुष्पव्यूह है।

(५) कैपिचुलम (Capitulum)—इसमें भी पुष्प-दण्ड के पर्वों का लोप हुआ रहता है, इसलिये पुष्प एक ही स्थान से निकलते हैं, पर यहां वे विनाल होते हैं। पुष्पदण्ड का अग्र जिसपर पुष्प लगे रहते हैं, प्रायः चिपटा और कहीं २ उन्नतोदर होता है। गेंदा तथा सूर्यमुखी में, जिसे हम साधारणतः एक पुष्प मानते हैं, वस्तुतः इसी प्रकार का पुष्पव्यूह होता है। ऐसा पुष्पव्यूह गेंदावर्ग का लाक्षणिक पुष्पव्यूह है। अम्बेल और कैपिचुलम दोनों में अधिक अवस्थावाले पुष्प किनारे की ओर होते हैं। इन दोनों में पुष्पव्यूह के नीचे हरी २ पत्तिओं का जो एक व अधिक चक्र होता है, उसे इन्वालुकर (Involucre) कहते हैं। पुष्पदण्ड का अग्रभाग कैपिचुलम में कहीं-कहीं नतोदर भी होता है। कहीं कहीं तो वह इतना नतोदर हो जाता है कि एक गोल पात्र की तरह मालूम होता है। ऐसी अवस्था में केवल ऊपर की ओर एक छोटा छिद्र होता है, और पुष्प उस पात्रवत् रचना की भीतरी दीवाल पर पाये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जाते हैं, जैसा कि वट, गूलर तथा पीपल आदि में देखा जाता है।

परिमित पुष्प व्यूह—इसका सबसे साधारण स्वरूप एकाकी तथा अन्तिम पुष्प है। परिमित तथा अपरिमित दोनों प्रकार के पुष्प व्यूहों में एक ग्रन्थि पर एक, दो अथवा दो से अधिक पुष्प वा पुष्प दण्ड निकल सकते हैं। उनकी संख्या के अनुसार पुष्प-व्यूह यूनीपैरस, वाइपैरस तथा मल्टीपैरस कहा जाता है। परिमित यूनीपैरस पुष्पव्यूह शाखाक्रम की तरह स्कारपायड (पारसीक यवानी) अथवा हेलीक्वायड (हस्ति शुण्डी) दो तरह का हो सकता है। शाखाक्रम की तरह परिमित और अपरिमित पुष्प व्यूहों का निर्णय भ्रमात्मक अवस्थाओं में पत्तिओं (वृन्तपत्रों) की स्थिति से ही किया जाता है। पुष्पव्यूह मिथ्या द्विविभक्त (Dichotomous Cyme जैसे Coral tree में तथा परिमित बहु विभक्त (Polychasium) भी होते हैं।

संयुक्त पुष्पव्यूह (Compound inflorescences) ये प्रायः सदण्डिक, समशिख, बिदण्डिक, मांसलविदण्डिक, सचूड़ तथा कैपिचुलम पुष्पव्यूहों की शाखाओं तथा प्रशाखाओं से बने होते हैं। जैसे गर्जरादि वर्ग में पुष्पों के स्थान में प्रायः पुष्पदण्ड पाये जाते हैं, जो पुष्पों के क्रम से ही निकले रहते हैं। इन पुष्प दण्डों पर फिर पुष्प सचूड़क्रम में निकले रहते हैं। इस पुष्पव्यूह को संयुक्त सचूड़ कहा जाता है और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नारी पुष्प और ऊपर नर पुष्प होते हैं। इसके उदाहरण खजूर, नारियल तथा सूरण आदि के पुष्पव्यूह हैं।

(४) सच्छत्र (Umbel)—यहां पुष्प सब सनाल होते हैं, पर लघ्वीकृत अक्ष में पर्वों के लोप हो जाने से सब पुष्प एक ही स्थान से निकलते हैं। गर्जरादि वर्ग का यह लाक्षणिक पुष्पव्यूह है।

(५) कैपिचुलम (Capitulum)—इसमें भी पुष्प-दण्ड के पर्वों का लोप हुआ रहता है. इसलिये पुष्प एक ही स्थान से निकलते हैं, पर यहां वे विनाल होते हैं। पुष्पदण्ड का अग्र जिसपर पुष्प लगे रहते हैं, प्रायः चिपटा और कहीं २ उन्नतोदर होता है। गेंदा तथा सूर्यमुखी में, जिसे हम साधारणतः एक पुष्प मानते हैं, वस्तुतः इसी प्रकार का पुष्पव्यूह होता है। ऐसा पुष्पव्यूह गेंदावर्ग का लाक्षणिक पुष्पव्यूह है। अम्बेल और कैपिचुलम दोनों में अधिक अवस्थावाले पुष्प किनारे की ओर होते हैं। इन दोनों में पुष्पव्यूह के नीचे हरी २ पत्तिओं का जो एक व अधिक चक्र होता है, उसे इन्वालुकर (Involucre) कहते हैं। पुष्पदण्ड का अग्रभाग कैपिचुलम में कहीं-कहीं नतोदर भी होता है। कहीं कहीं तो वह इतना नतोदर हो जाता है कि एक गोल पात्र की तरह मालूम होता है। ऐसी अवस्था में केवल ऊपर की ओर एक छोटा छिद्र होता है, और पुष्प उस पात्रवत् रचना की भीतरी दीवाल पर पाये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जाते हैं, जैसा कि वट, गूलर तथा पीपल आदि में देखा जाता है।

परिमित पुष्प व्यूह—इसका सबसे साधारण स्वरूप एकाकी तथा अन्तिम पुष्प है। परिमित तथा अपरिमित दोनों प्रकार के पुष्प व्यूहों में एक ग्रन्थि पर एक, दो अथवा दो से अधिक पुष्प वा पुष्प दण्ड निकल सकते हैं। उनकी संख्या के अनुसार पुष्प-व्यूह यूनीपैरस, बाइपैरस तथा मल्टीपैरस कहा जाता है। परिमित यूनीपैरस पुष्पव्यूह शाखाक्रम की तरह स्कारपायड (पारसीक यवानी) अथवा हेलीक्वायड (हस्ति शुण्डी) दो तरह का हो सकता है। शाखाक्रम की तरह परिमित और अपरिमित पुष्प व्यूहों का निर्णय भ्रमात्मक अवस्थाओं में पत्तिओं (वृन्तपत्रों) की स्थिति से ही किया जाता है। पुष्पव्यूह मिथ्या द्विविभक्त (Dichotomous Cyme जैसे Coral tree में तथा परिमित बहु विभक्त (Polychasium) भी होते हैं।

संयुक्त पुष्पव्यूह (Compound inflorescences) ये प्रायः सदण्डिक, समशिख, विदण्डिक, मांसलविदण्डिक, सचूड़ तथा कैपिचुलम पुष्पव्यूहों को शाखाओं तथा प्रशाखाओं से बने होते हैं। जैसे गर्जरादि वर्ग में पुष्पों के स्थान में प्रायः पुष्पदण्ड पाये जाते हैं, जो पुष्पों के क्रम से ही निकले रहते हैं। इन पुष्प दण्डों पर फिर पुष्प सचूड़क्रम में निकले रहते हैं। इस पुष्पव्यूह को संयुक्त सचूड़ कहा जाता है और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अधिकतर यही पाया भी जाता है। संयुक्त सदण्डिक (Panicle) के उदाहरण बहुत कसरत से पाये जाते हैं। संयुक्त मांसल विदण्डिक ताड़ जाति के पौधों में पाया जाता है, संयुक्त विदण्डिक (Compound Spike अथवा Spike of spikelets) गोधूमवर्ग में पाया जाता है, और संयुक्त कैपिचुलम उत्कंटक (Echinops) में होता है। संयुक्त सचूड़ में द्वैतीयक पुष्प-दण्डों के आधार पर पाये जानेवाले वृन्तपत्रों के चक्र को इन्वालुकर और त्रैतीयक पुष्पदण्डों वा पुष्पनालों के आधार पर पाये जाने वाले वृन्तपत्रों के चक्र को इन्वालुसेल (Involucel) कहते हैं। कैपिचुलम में इन्वालुकर के अतिरिक्त, जो दो या तीन चक्रों में भी हो सकता है, प्रत्येक पुष्प के साथ भी प्रायः सफेद पतले वृन्तपत्र होते हैं जिन्हें पेलिया (Palaea) कहते हैं।

मिश्रित पुष्पव्यूह (Mixed inflorescences)— मिश्रित और संयुक्त पुष्पव्यूहों में केवल इतना ही अन्तर है कि मिश्रित में पुष्पदण्डिकाओं का क्रम पुष्पों के क्रम से भिन्न होता है और संयुक्त में एकही। जैसे पुष्पदण्ड सदण्डिक क्रम में निकलें, और उनके पुष्प विदण्डिक-क्रम में, तो वह व्यूह मिश्रित अथवा विदण्डिकों का सदण्डिक पुष्पव्यूह कहा जायगा। इसी तरह कैपिचुलम के सदण्डिक और विदण्डिक दोनों प्रकार के मिश्रित पुष्पव्यूह हो सकते हैं।

पुष्पव्यूह के कुछ विशेष भेद—(१) तुलसी तथा इस वर्ग के अन्य पौधों में पत्तिआं विपरीत होती हैं, और प्रत्येक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ग्रन्थि पर पुष्पों का एक चक्र दिखायी पड़ता है। इन दिखाऊ चक्रों को **वर्टीसिलास्टर** कहते हैं। यहां वस्तुतः प्रत्येक पत्ती के अक्षकोण में परिमित द्विविभक्त पुष्पव्यूह होता है। परन्तु ग्रन्थिओं पर एकहो २ पुष्पदण्डिका निकलती है। चूंकि पुष्प-दण्ड के पर्व बहुत संक्षिप्त होते हैं, और पुष्प विनाल होते हैं, इसलिये पुष्पव्यूह के यथार्थ रूप का पता चलाना कठिन होता है।

(२) दुग्धिका जाति (Euphorbia) के पुष्पव्यूह को **सायथियम (Cyathium)** कहते हैं। इसमें एक प्याले के आकार की रचना होती है जिसकी ऊपरी धार पर कई अर्ध-चन्द्राकार गण्डवल्क (Glandular scale) होते हैं। प्याले के अन्दर कई पुष्पलिंग और उनके मध्य में एक योनिचक्र होता है, अर्थात् उसकी रचना ऐसी होती है कि वह एक पुष्प मालूम पड़ता है, परन्तु वस्तुतः वह एक पुष्पव्यूह होता है। उसके प्रत्येक पुष्पलिंग को एक नर पुष्प और योनिचक्र को नारी पुष्प मानते हैं। क्योंकि पुष्पलिंग अलग २ डंठलों द्वारा जुड़े रहते हैं, और प्रत्येक के आधार पर एक २ वल्की वृन्तपत्र भी होता है। इसी प्रकार योनिचक्र भी एक डंठल द्वारा जुड़ा रहता है।

अपरिमित और परिमित पुष्पव्यूहों की तुलना

परिमित पुष्पव्यूह से अपरिमित पुष्पव्यूह की अपेक्षा पौधों को अधिक लाभ होता है, क्योंकि पहले में अनुक्रमिक पुष्प

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुष्पव्यूह के बाहर की ओर निकलते हैं, और पुराने उनके मध्य में रहते हैं, जिससे पहले बने हुए फलों की रक्षा बीच में होने से अधिक अच्छी तरह से हो जाती है। इसके अतिरिक्त अपरिमित पुष्पव्यूहों में प्रायः सब पुष्प करीब-करीब साथ आते हैं जैसा कि कैपिचुलम सचूड़ तथा समशिख पुष्पव्यूहों में अधिकता से होता है। ऐसी अवस्था में यह डर रहता है, कि यदि पुष्प आने के थोड़े से समय में गर्भाधान कराने की अवस्थायें किसी कारण न प्राप्त हो सकीं, तो बीज का बनना असम्भव हो जायगा। तीसरा यह लाभ है, कि यदि किसी कारण से अपरिमित पुष्पव्यूह का वृद्धि शील अग्र नष्ट हो जाय तो नये पुष्पों का बनना कम से कम कुछ समय के लिये अवश्य बन्द हो जायगा। पर परिमित में ऐसा होने पर केवल एक पुष्प की हानि होगी। इन बातों से यही मालूम होता है, कि विकास की दृष्टि से परिमित पुष्प व्यूह का स्थान अपरिमित से ऊंचा है—अर्थात् परिमित पुष्पव्यूह का अपरिमित से ही विकास हुआ है।

पुष्पव्यूह और सेचन क्रिया (Inflorescence & Polli nation)—पौधों की सन्तानोत्पत्ति में सेचन की एक मुख्य क्रिया है, जिसमें पुष्प व्यूह कई तरह से सहायक होता है। भिन्न-भिन्न प्रकार के पुष्पव्यूहों में समशिख, मांसल विदण्डिक, लम्बित, सचूड़ कैपिचुलम विशेष प्रकार से उल्लेखनीय है। समशिख, सचूड़ तथा कैपिचुलम पुष्पव्यूहों में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुष्प इस तरह क्रमबद्ध रहते हैं कि वे देखने में अधिक आकर्षक होते हैं, और सेचन करने वाले कीड़ों को आकर्षित करने में अधिक सफल होते हैं। इसके अतिरिक्त उनके पुष्प समूह बद्ध होते हैं, जिससे थोड़े ही समय में थोड़े ही कीड़ों द्वारा सब पुष्पों का सेचन हो जाता है। मांसल विदण्डिक में स्पेथ भी कीड़ों को आकर्षित करने का एक साधन है। लम्बित पुष्प व्यूह इस प्रकार हवा में स्वतन्त्रता पूर्वक झूला करता है, कि उसके पराग प्रसार में वायु द्वारा बड़ी सहायता मिलती है। समूह बद्ध होकर रहने में प्रत्येक पुष्प को अपनी रक्षा के लिये अलग-अलग पुटचक्रों की कहीं-कहीं आवश्यकता ही नहीं होती, इसीलिये गेंदा वर्ग में पुटचक्र का बहुत कम वा बिल्कुल विकास नहीं हुआ रहता। इस वर्ग में प्रायः प्रत्येक पुष्प के लिये आकर्षक दलचक्र की भी आवश्यकता नहीं होती। यहां इसके लिये केवल बाहरी पुष्पों में दलचक्र का पूर्ण विकास होता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिच्छेद ५

पुष्प (Flower).

पुष्प एक परिवर्तित शाखा है, जिसकी पत्तिआं सन्तानोत्पत्ति के लिये विशेष प्रकारसे रूपान्तरित हो गयी हैं। इसके लिये निम्नलिखित प्रमाण हैं—

(१) पुष्प पहले एक कलिका के रूप में प्रकट होता है, जो प्रायः अक्षकोणीय होती हैं।

(२) पुष्पनाल तथा स्तम्भक की बनावट तने की तरह होती है, और उससे निकले हुए दल तथा पुटपत्रों का आकार तथा विकास साधारण पत्तिओं के आकार तथा विकास के समान होता है।

(३) जैसे तने पर पत्तियों का क्रम चाक्रिक अथवा पेचदार होता है, वैसे ही स्तम्भक पर भी पुष्प-पत्रों का क्रम चाक्रिक अथवा पेचदार होता है।

(४) जैसे तने में ग्रन्थियां और पर्व होते हैं, वैसे ही कुछ पौधों के पुष्पों में भी पर्व और ग्रन्थिआं पायी जाती हैं। सफेद पुष्पवाले हुलहुल में दलचक्र और लिंगचक्र के बीच तथा लिंगचक्र और योनिचक्र के बीच एक २ पर्व होते हैं। इसी तरह मुचकुन्द में भी लिंगचक्र और योनिचक्र के बीच एक पर्व होता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(५) पुष्पलिंग और पुष्पयोनियां भी यद्यपि आकार और कार्य में साधारण पत्तिओं से बहुत भिन्न होती हैं, पर उनको भी प्रमाणों द्वारा पत्तिओं का ही रूपान्तर मानते हैं। लिंगसूत्र पत्रनाल का, लिंगछत्र फलक का, लिंगछत्र के दोनों विच्छेद फलक के दोनों भागों के, और संयोजक मध्यपर्शुक के रूपान्तर होते हैं। इसके अतिरिक्त शलूक और पद्म में पुटपत्र दलपत्रों में और दलपत्र पुष्पलिंगों में बदल जाते हैं। इसी प्रकार जंगली गुलाब, पोस्ता तथा गन्धराज आदि में दलपत्रों की संख्या उस अवस्था में कम रहती है, जब ये पौधे स्वयं उगते हैं, परन्तु जब उन्हीं को माली बागों में लगा देते हैं, तो प्रायः दलपत्रों की संख्या अधिक और पुष्पलिंगों की कम हो जाती है। इसी तरह गुलाब के पुष्प में योनिचक्र के स्थान पर कभी २ पत्रवत् रचनायें देखने में आती हैं।

उपर्युक्त प्रमाणों से पुष्प का एक परिवर्तित शाखा होना सिद्ध हो जाता है। जिन परिवर्तनों के द्वारा यह रूपान्तर होता है, वे ऐसे होते हैं, जो सन्तानोत्पादन में सहायता पहुँचाते हैं। जैसे पत्तिआं प्रायः हरी न होकर भिन्न-भिन्न सुन्दर तथा आकर्षक रंगों में रंग जाती हैं, जिससे सेचन कराने वाले कीड़ों का आकर्षण होता है। उन्हें स्टार्च आदि बनाने के काम से छुट्टी मिल जाती है, इसलिये प्रकाश के लिये अलग तथा सुदूर ग्रन्थिओं पर होने की आवश्यकता नहीं होती, और पर्वों का लोप हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पुष्प रचना—पुष्प सनाल (Pedicellate) अथवा विनाल (Sessille) होते हैं। नाल का सिरा जहां से पुष्प पत्र निकले रहते हैं स्तम्भक (Thalamus) कहा जाता है। किसी एक प्रामाणिक पुष्प में चार भाग होते हैं। सबसे नीचे हरी तथा छोटी-छोटी पत्तिओं का चक्र होता है, जिसे पुटचक्र (Calyx) कहते हैं। उसकी प्रत्येक पत्ती को पुटपत्र (Sepal) कहते हैं। इसके ऊपर दूसरा चक्र प्रायः रंगीन पत्तिओं का होता है, जिसे दलचक्र कहते हैं। इसकी प्रत्येक पत्ती को दलपत्र (Petal) कहते हैं। तीसरा भाग प्रायः रेखाकार अवयवों का बना होता है, जिसे लिंगचक्र (Andraecium) कहते हैं। इसके प्रत्येक रेखाकार भाग को पुष्पलिंग (Stamen) कहते हैं। चौथे भाग को जो सबके मध्य में होता है योनिचक्र (Gynecium) कहते हैं। इसके प्रत्येक छोटे-छोटे हिस्से को पुष्प योनि (Carpel) कहते हैं।

स्तम्भक—यह प्रायः तीन संक्षिप्त पर्वों का बना होता है, जो कहीं-कहीं बड़े भी हो जाते हैं। दल और पुटचक्रों के बीच के बढ़े हुए पर्व को एन्थोफोर (Anthophore) दल और लिंगचक्र के बीच एक बढे हुए पर्व को एेण्ड्रोफोर (Androphore तथा लिंग चक्रों के बीच के बढ़े हुए पर्व को गाइनोफोर (Gynophore) कहते हैं। गर्जरादि वर्ग में स्तम्भक पुष्प योनिओं के बीच से होता हुआ ऊपर की ओर बढ़ जाता है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और पुष्प-योनियां उससे जुड़ी हुई रहती हैं। स्तम्भक के इस बढ़े हुए भाग को कार्पोफोर कहते हैं। स्तम्भ की अनुप्रस्थ अथवा पार्श्वीय वृद्धि भी हो सकती है, जिससे वह उन्नतोदर, चिपटा अथवा गहरा प्याले के आकार का हो जाता है। जब स्तम्भक उन्नतोदर, अथवा न्यूनाधिक चिपटा होता है तो पुष्प के सब भाग इस प्रकार क्रमबद्ध रहते हैं कि सबसे नीचे पुटचक्र, फिर, दलचक्र, उसके ऊपर लिंगचक्र और और बीच में योनिचक्र होता है। ऐसे पुष्पों को हाइपोगाइनस (Hypogynous) कहते हैं। जब स्तम्भक फैलकर नतोदर हो जाता है, और प्याले की तरह हो जाता है तो पुट दल तथा लिंगचक्र तो एक साथ उसकी ऊपरी धार पर निकले रहते हैं, और बीच में पेंदीपर योनिचक्र होता है। ऐसे पुष्पों को पेरिगाइनस (Perigynous) कहते हैं। ऐसा पुष्प गुलाब में होता है। यदि स्तम्भक इससे कुछ और अधिक बढ़कर ऊपर की ओर चारों से आकर मिल जाय, तो तीसरे प्रकार का पुष्प बनेगा, जिसे इपीगाइनस (Epigynous) कहते हैं। इसमें योनिचक्र का गर्भाशय वाला भाग स्तम्भक के अन्दर बन्द रहता है, और पुट, दल, लिंगचक्र तथा योनिचक्र के शेष भाग गर्भाशय के ऊपर से निकले हुए मालूम होंगे।

पेरिगाइनस पुष्पों में स्तम्भक के नलिकाकार भाग को पुटनलिका (Calyx tube) कहते हैं। पहले दोनों प्रकार के पुष्पों में गर्भाशय को सुपीरियर, और तीसरे में इन्फीरियर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहते हैं। स्तम्भक के मुख्य वहिरुद्भेद को, जो वहुत से पौधों में पाया जाता है, डिस्क (Disc) कहते हैं। यह भिन्न-भिन्न आकार का, तथा पूर्ण, कटा हुआ, दन्दानेदार, त्रिभक्त अथवा स्वतन्त्र विच्छेदों वाला हो सकता है। पुष्प में स्तम्भक से निकलनेवाली प्रायः सभी प्रकार की रचनाओं को, जिनका काम मधु-निर्माण तथा मधु संचय का होता है, डिस्क कहते हैं। पुष्प के अन्य भागों से भी मधु बनाने वाले वहिरुद्भेद निकलते हैं जिन्हें मधुगंड (Nectary gland) कहते हैं।

पेरियंथ (Perianth)—पुट और दल दोनों चक्रों को प्रायः पेरियंथ का नाम दिया जाता है। इसके प्रायः दो भिन्न २ भाग हो जाते हैं, जो कार्य तथा रूप आदि में एक दूसरे से वहुत भिन्न होते हैं। ऐसी अवस्था में उन दोनों को पुट तथा दलचक्र के नाम से ही पुकारते हैं। परन्तु कुछ ऐसे भी पुष्प हैं, जिनके दोनों चक्र अपने लक्षणों से अलग नहीं किये जा सकते। वे सब रंग-रूप में एक समान होते हैं। ऐसी अवस्था में उन्हें पेरियंथ के ही नाम से पुकारते हैं। बहुत से पौधों में दो चक्रों के स्थान में एक ही चक्र पाया जाता है, जो कहीं पुटचक्र, कहीं दलचक्र और कही परिसवर्ण (Perianth) कहा जाता है। जिन पौधों में एक ही चक्र का होना वंश का लक्षण है, उनमें उसे परिसवर्ण और जिनमें वह चक्र दूसरे चक्र के लुप्त हो जाने से अवशिष्ट-चक्र के रूप में मौजूद है, उसे पुटचक्र या दलचक्र कहते हैं। जैसे, एरण्ड में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उस चक्र को परिसवर्ग और मोरवेल में पुटचक्र कहते हैं। जिन पुष्पोंमें दोनों चक्र होते हैं, उन्हें डाइक्लेमीडियस (Dichlamydeous), जिनमें एक हो इसे मोनोक्लेमीडियस और जिनमें एक भी न हो, उसे एक्लेमीडियस कहते हैं।

पुटचक्र—इसका कार्य साधारणतः पुष्प-कलिका को सुरक्षित रखने का है। ये प्रायः हरे होते हैं, पर कहीं-कहीं रंगीन भी होते हैं। रंगीन पुटपत्रों को पेटलायड (Petaloid) कहते हैं। इनका क्रम अधिकतर चाक्रिक (Cyclic) होता है, पर कहीं-कहीं (नागफनी) वे पेचदार क्रम (Spiral) में भी होते हैं। जब सब पुटपत्र आकार तथा कद में समान होते हैं, तो पुटचक्र नियमित, नहीं तो अनियमित (Irregular) कहा जाता है। पुटपत्र जब एक दूसरे से पूर्णतः अलग अलग होते हैं; तो पुटचक्र पालीसेपलस कहा जाता है, और वे जब मिले होते हैं, तो गैमोसेपलस कहा जाता है। दूसरी अवस्था में भी वे ऊपर की ओर कुछ न कुछ एक दूसरे से अलग होते हैं। इन्हीं स्वतन्त्र भागों को गिनकर पुटपत्रों की संख्या का ;निर्णय किया जाता है। बहुत से पौधों में पुटचक्र के अतिरिक्त पुटचक्र के नीचे हरी-हरी पत्तिओं का एक और चक्र होता है, जिसे इपीकैलिक्स (Epicalyx) कहते हैं। यह कहीं-कहीं पुटपत्रों के पुंखपत्रों से, और कहीं-कहीं वृन्तपत्रकों के समूह से बना होता है।

बहुत से पुष्पों में पुष्पकलिका के खिलने के साथ पुटपत्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गिर जाते हैं। ऐसे पुटपत्रों को पूर्वपाती (Caducous) कहते हैं, जैसे स्वर्णक्षीरी में। परन्तु बहुतों में पुष्प के साथ ही यह सूखता है। वहां इसे पश्चात्पाती (Deciduous) कहते हैं। अन्य बहुत से पौधों में पुटचक्र स्थायी (Persistent) होता है अर्थात् फल के साथ भी मौजूद रहता है। स्थायी पुटचक्र फल की भी रक्षा करता है, इसीलिये कहीं-कहीं यह फल के साथ बढ़ भी जाता है, और मकोय में तो यह फल को पूर्णतः ढक लेता है। चूंकि पुटचक का कार्य रक्षा सम्बन्धी है, इसलिये यदि पुष्प की रक्षा किसी और तरह से हो जाती है तो इसका बहुत कम अथवा बिल्कुल विकास नहीं होता। इसीलिये गेंदा तथा गर्जरादि वर्गों में जहां पुष्पों की रक्षा समीपवर्ती अन्य पुष्पों के द्वारा हो जाती है, पुटचक्र नहीं पाया जाता, अथवा उसका पूर्ण विकास नहीं हुआ रहता। गेंदावर्ग के पुष्पों में पुटचक्र के स्थान में लम्बी रोमवत रचनायें पायी जाती हैं, जो फल-प्रसार में सहायता पहुंचाती हैं। इसे रोमश-पुट (Pappus) कहते हैं।

पुटपत्रों का पूर्ण रूप से वर्णन करना हो तो उसका वर्णन एक साधारण पत्ती की तरह करना चाहिये। इसके वर्णन में जिन विशेष शब्दों का प्रयोग होता है वे नीचे दिये गये हैं—

(१) Spurred (स्पर्ड या लांगूलित) पुटपत्र उन्हें कहते हैं, जिनके आधार पर बाहर की ओर एक नलिकाकार भाग निकला हो, जैसे त्रायमाण जाति में।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(२) Saccate (सैकेट या तुंदुल) पुटपत्रों के आधार कोषमय अथवा पाकेटयुक्त होते हैं जैसे सर्षप में।

(३) Hooded (फणाकार) पुटपत्र ऊपर सर्प के फण की तरह, और इतने बड़े होते हैं, कि पुष्प के शेष भाग उसके नीचे पड़ जाते हैं जैसे अतीस में। उपर्युक्त प्रकार के पुटपत्र प्रायः पालीसेपलस पुटचक्र में पाये जाते हैं। गैमोसेपलस पुटचक्र के लिये निम्नलिखित शब्दों का प्रयोग होता है:—

(१) नलिकाकार (Tubular) यदि पुटचक्र नलिका की तरह ऊपर से नीचे तक एकही चौड़ाई का हो (२) घंटिकाकार (Campanulate), यदि उसका आकार घंटी की तरह हो (३) फनेलाकार (Funnel shaped अथवा Infundibuliform) यदि नीचे का भाग कम चौड़ा और ऊपर का क्रमशः अधिक चौड़ा होता गया हो। (४) Bilabiate अथवा द्विओष्ठी यदि अनियमित पुटचक्र में ऊपर की ओर दो ओष्ठवत् भाग हो गये हों।

इनके अतिरिक्त पुटचक्र गोला (Globose) अथवा सुराही के आकार का (Urceolate) भी हो सकता है।

दलचक्र:—दलपत्र प्रायः सेचन कराने के लिये कीड़ों को आकर्षित करते हैं, अतः वे प्रायः रंगीन तथा सुगन्धयुक्त होते हैं। गर्भाधान के बाद इसीलिये वे प्रायः सूख भी जाते हैं। इनका प्रायः एकही चक्र होता है, परन्तु कहीं २, जैसे किसी २ धतूर और पोस्ते में, उनके दो चक्र होते हैं। कहीं २ इसका अभाव होता है (मोरबेल), और कहीं २ इसके स्थान पर मधु-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोष पाये जाते हैं (अतीस)। बहुत से पौधों में दलपत्र पुटपत्रों की तरह हरे होते हैं, और सेपलायड दलपत्र कहे जाते हैं। पुटपत्रों की तरह दलचक्र भी नियमित अथवा अनियमित, चाक्रिक अथवा पेचदार, संयुक्त (गैमोपेटलस) अथवा स्वतन्त्र (पालीपेटलस) हो सकते हैं। इनके आकार का परिचय कराने के लिये भी प्रायः उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जिनका पुटपत्रों के लिये किया गया है।

कुछ विशेष प्रकार के दलपत्र तथा दलचक्र भी पाये जाते हैं। यदि दलपत्र का आधार नाल की तरह पतला हो, और ऊपर का भाग अधिक चौड़ा और फैला हुआ हो, तो उसे क्लाड (Clawed) कहते हैं। सर्षप में ऐसे ही चार दलपत्र होते हैं, जो पुष्प के कोणीय धरातलों में स्तम्भक से जुड़े रहते हैं। ऐसे दलचक्र को क्रूसीफार्म (Cruciform) कहते है यह सर्षप-वर्ग का लाक्षणिक दलचक्र है। क्लाड दलपत्रों में कहीं २ पतले और चौड़े भागों के जोड़ पर एक रेखा में बहुत से रोम पाये जाते हैं। इस रचना को लिग्यूल (Ligule) कहते हैं। गेंदावर्ग में ऐसे ही दलपत्र पाये जाते हैं, जहां इनसे युक्त पुष्पों को लिग्यूलेट कहते हैं। एक और भी विशेष प्रकार का दलचक्र शिम्बीवर्ग के कुछ पौधों में पाया जाता है, जिसे पैपिलिओनेशस् (Papilionaceous) दलचक्र कहते हैं। इसके पांच दलपत्रों में से पोस्टीरियर (Posterior) दलपत्र, अर्थात् जो दलपत्र तने और पुष्प के मध्य में पड़ता है, सबसे बड़ा रहता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है, और कलिकावस्था में पुष्प के शेष सब भागों को ढके रहता है। दो पार्श्वीय दलपत्र छोटे होते हैं, और शेष दूसरी ओर के दोनों दलपत्र परस्पर मिलकर एक नौकाकार रचना बना लेते हैं। लिंगचक्र और योनिचक्र इसी रचना के अन्दर छिपे रहते हैं। इस प्रकार के दलचक्र में पोस्टीरिअर दलपत्र को स्टैण्डर्ड (Standard) पार्श्वीय दलपत्रों का विंग्स (Wings) और नौकाकार रचना को कील (Keel) कहते हैं।

यदि दलचक्र के सब दलपत्रों की धारें अधिक से अधिक परस्पर स्पर्श करती हों तो उन्हें संलग्न (Valvate) कहते हैं। यदि किसी की दोनों धारें ऊपर हों और किसी की दोनों नीचे हों, और कुछ दलपत्रों की एक धार ऊपर हो और एक नीचे हो, तो ऐसे दलपत्रों से बने हुए दलचक्र को आच्छादित (Imbricate) कहते हैं। इसके अतिरिक्त बहुत से ऐसे भी पुष्प पाये जाते हैं, जिनके सब दलपत्रों की एक धार ऊपर और एक नीचे होती है। ऐसे दलचक्र को क्रमाच्छादित (Twisted) कहते हैं। इन शब्दों का प्रयोग इन्हीं अर्थों में पुटचक्र के लिये भी किया जाता है।

पुष्प के आवश्यक भाग—पुष्प के चारों भागों में से लिंगचक्र और योनिचक्र आवश्यक भाग कहे जाते हैं, क्योंकि लैंगिक सन्तानोत्पत्ति के लिये इन दोनों का रहना नितान्त आवश्यक है। पुटचक्र और दलचक्र दोनों सहायक अथवा अनावश्यक भाग माने जाते हैं। जिन पुष्पों में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चारों भाग रहते हैं, उनको पूर्ण (Complete), और जिनमें कम भाग होते हैं उनको अपूर्ण (Incomplete) पुष्प कहते हैं जिन पुष्पों में दोनों आवश्यक भाग रहते हैं, उनको द्विलिंगी (Bisexual, Hermaphrodite अथवा Perfect) पुष्प कहते हैं, और जिनमें दोनों में से एक ही होता है, उन्हें एक लिंगी (Unisexual अथवा Imperfect) पुष्प कहते हैं। इनमें भी जिनमें लिङ्गचक्र अर्थात् नर भाग होता है, उन्हें नर-पुष्प (Male अथवा Staminate) कहते हैं, और जिनमें योनिचक्र अर्थात् नारी भाग होता है, उन्हें नारी-पुष्प Female अथवा Pistillate कहते हैं। चूंकि दोनों ही आवश्यक भाग हैं, इसलिये प्रत्येक उपजाति में उनका रहना आवश्यक है। कहीं२ तो उपजाति के प्रत्येक पौधों में प्रत्येक पुष्प द्विलिङ्गी होता है, कहीं-कहीं प्रत्येक पौधों के कुछ पुष्प नर-पुष्प, और कुछ नारी पुष्प होते हैं। इनके साथ कहीं द्विलिंगी पुष्प भी होते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ उपजातियां ऐसी भी होती हैं, जिनके कुछ पौधों में केवल नरपुष्प और कुछ में केवल नारीपुष्प होते हैं, जैसे ताड़, खजूर, भांग आदि। कुछ पौधों में थोड़े से पुष्प ऐसे भी होते हैं, जो नपुंसक Neuter होते हैं। ऐसे पुष्प गेंदा-वर्ग के कुछ पौधों में पाये जाते हैं।

लिंगचक्र—एक प्रामाणिक पुष्पलिंग के तीन भाग होते हैं। नीचे का भाग पतला नालवत होता है। उसे लिंगसूत्र Filament कहते हैं। इसके अग्रपर पुष्पलिंग का वह भाग

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहता है, जिसमें पराग रहता है, और जिसे लिंगछत्र Anther कहते हैं। प्रत्येक लिंगछत्र के प्रायः दो भाग होते हैं जिन्हें छत्र विच्छेद Anther-lobe कहते हैं। इन दोनों विच्छेदों को जोड़ने वाला पुष्पलिंग का तीसरा भाग होता है, जिसे संयोजक Connective कहते हैं। यह एक ऐसे तंतु का बना रहता है, जिसमें नाड़ी तंतु भी होता है। यदि प्रत्येक छत्र विच्छेद को काटकर देखा जाय तो प्रत्येक के अन्दर दो-दो कोष Chamber अथवा sac मिलेंगे, जो धूली के समान छोटे-छोटे कणों से भरे रहते हैं, इन कोषों का परागकोष Pollen Sac और छोटे-छोटे कणों को पराग कण Pollen-grain कहते हैं। किसी २ पौधों में पुष्पलिंग एक ही छत्र विच्छेद वाला होता है, क्योंकि वहां पुष्पलिंग निकलने के साथ ही कई भागों में बट जाता है, जिससे पुष्पलिंग की संख्या भी बढ़ जाती है, और उनमें एक ही छत्र विच्छेद होता है। ऐसा एरण्ड में पाया जाता है।

लिंगछत्र लिंग सूत्र से कई तरह से जुड़ा हुआ रहता है। कहीं लिंग सूत्र के आधार से (Basi fixed) और कहीं पृष्ठ से (Dorsi fixed) जुड़ा रहता है। कहीं कहीं लिंग सूत्र पृष्ठ से इस प्रकार जुड़ा रहता है, कि सूत्रपर छत्र स्वतन्त्रता पूर्वक गति कर सकता है। ऐसे छत्र को वर्सेटाइल (Versatile) कहते हैं।

लिंगछत्र का स्फोटन Dehiscence of Anthers-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जब पराग कण परिपक्व हो जाते हैं, तो लिंग छत्र फूट जाते हैं और पराग कण पराग कोष से निकलकर कीड़ों द्वारा अथवा अन्य साधनों द्वारा अपना प्रसार कराते हैं। लिंग छत्रों का स्फोटन कई प्रकार का होता है। कहीं-कहीं वे आधार से शीर्ष-तक लम्बी रेखा में फटते हैं। इस विधि को लम्ब स्फोटन (Longitudinal) कहते हैं। कहीं-कहीं वे पूरी लम्बाई में न फटकर केवल थोड़ी दूर तक फट जाते हैं। बहुत से पौधों में (बैगन) पराग कणों के निकलने के लिये छत्र विच्छेदों की दीवाल में छोटे-छोटे छिद्र बन जाते हैं। ऐसे स्फोटन को छिद्रल (Porous) स्फोटन कहते हैं। कहीं-कहीं (तेजपात) पराग कोष की दीवाल का कुछ भाग कपाट की तरह खुल जाता है। ऐसे स्फोटन को कपाट स्फोटन (Transverse) कहते हैं। इन सबमें लम्ब स्फोटन अधिक पाया जाता है। इसमें भी यदि स्फोटन भीतर की ओर होता है, तो अन्तर्मुखी (Introrse) और बाहर की ओर होता है, तो वहिर्मुखी Extrorse कहा जाता है। पार्श्व में होने पर पार्श्वमुखी Lateral या पार्श्वीय भी कहा जाता है। बहुत से पुष्पों के कुछ पुष्पलिंगों में छत्र नहीं भी होते। ऐसे पुष्प लिंगों को विछत्रलिंग Staminode कहते हैं, जैसे मौलसिरी तथा चम्पा में। ये विछत्रलिंग कहीं-कहीं दलपत्रवत हो जाते हैं, जैसे भूमि चम्पा, सर्वजय आदि में। बहुत से पुष्पों में मधुकोष पुष्प-लिंगों के वहिरुद्भेद मात्र होते हैं (वायलेट में)।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लिंगचक्र में संसक्ति (Cohesion) और संश्लेष (Adhesion) दोनों के उदाहरण मिलते हैं। लिंगचक्र के पुष्पलिंग जब सब स्वतंत्र होते हैं तो वह पालीएँड्रस कहा जाता है, परन्तु जब वे परस्पर मिले होते हैं, तो लिंगचक्र दो तरह का होता है। एक में पुष्पलिंगों के केवल छत्र आपस में मिले होते हैं, और दूसरे में उनके केवल सूत्रभाग मिले रहते हैं। इन दोनों अवस्थाओं में लिंगचक्र को क्रमशः सिंजिनीसस् (Syngenesious) और एडल्फस (Adelphous) कहते हैं। ये दोनों अवस्थायें संसक्ति की हैं क्योंकि इनमें सजातीय (Similar) भागों का संयोग हुआ है। सिंजिनीसस लिंगचक्र गेंदावर्ग में और एडल्फस लिंगचक्र कार्पासवर्ग में पाया जाता है। एडल्फस लिंगचक्र में कहीं २ सब पुष्पलिंग मिलकर एक बण्डल बनाते हैं, और कहीं २ वे कई बण्डलों में मिले रहते हैं। बण्डलों की संख्या के अनुसार वे मानो, डाइ, ट्राई तथा पालीएडल्फस कहे जाते हैं। मटर में डाइएडल्फस और सेमर में ५ एडल्फस या पालीएडल्फस के उदाहरण मिलते हैं। कंघी में मानो एडल्फस लिंगचक्र होता है।

धतूर में पुष्पलिंग दलपत्रों के आधार पर इस तरह मिले रहते हैं, कि वे दलपत्रों से ही निकले हुए मालूम होते हैं। ऐसी अवस्था में दलपत्रों को इपीपेटलस Epipetalous कहते हैं, कभी कभी वे योनिचक्र से भी मिले हुए मालूम होते हैं, और गाइनैंड्रस कहे जाते हैं। ऐसा मदार, रासना तथा इसरमूल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में होता है। ये संश्लेष अर्थात् विजातीय भागों के संयोग के ये उदाहरण हैं।

बहुत से पुष्पों में पुष्पलिंगों की लम्बाई में भी भिन्नता पायी जाती है। सर्षप वर्ग के पुष्पों में कुल ६ पुष्पलिंग होते हैं, जिनमें दो छोटे और चार बड़े होते हैं। ऐसे लिंग चक्र को टेट्राडाइनमस Tetradynamous कहते हैं। तुलसीवर्ग के बहुत से पुष्पों में कुल चार पुष्पलिंग होते हैं, जिनमें दो छोटे दो बड़े होते हैं, इन्हें Didynamous डाइडाइनमस कहते हैं।

परागपिंड—पराग कोष के अन्दर पराग प्रायः धूल के छोटे-छोटे कणों के रूप में पाया जाता है, परन्तु कहीं-कहीं उसके सब कण मिलकर एक या अधिक पिण्डवत रचनायें बना लेते हैं, जिन्हें परागपिण्ड Pollinium कहते हैं। प्रत्येक परागपिण्ड २, ४, ८, अथवा अधिक परागकणों का बना होता है। आर्किड वर्ग में उनकी संख्या प्रायः सम और दो से ८ तक की होती है। कहीं कहीं पराग कोष के सब परागकण मिलकर एक या दो पराग पिण्ड बनाते हैं। साधारणतः पराग पिण्ड एक नाल से जुड़ा रहता है जिसे पिण्डनाल (Caudicle) कहते हैं। दो-दो पराग पिण्ड कहीं-कहीं पिण्डनालों द्वारा एक ही डिस्क से जुड़े रहते हैं। मदारवर्ग तथा बब्बूलादि उपवर्ग में भी पराग पिण्ड होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

योनिचक्र

इस चक्र को पुष्प योनिओं को भी साधारणतः पत्ती का रूपान्तर मानते हैं, पर इनके आकार को देखकर इस बात पर विश्वास नहीं होता, यद्यपि गुलाब, गन्धराज तथा जंगली बादाम के पुष्पों में पुष्प योनिओं का पत्रवत् परिवर्तन देखकर इसकी सत्यता भी प्रमाणित सी हो जाती है। यदि यह बात सत्य है तो, पुष्पयोनि का सम्भवतः निम्न रीति से विकास हुआ होगा। पत्ती मध्यपर्शुक पर दोहरी हो गयी होगी, और फलक की दोनों धारें मिल गयी होंगी। इस प्रकार से प्राप्त होने वाली रचना में दो संयोग रेखायें Suture होंगी। मध्य का भाग लम्बा और उसका अग्र कुछ मोटा होकर योनि छत्र हो गया होगा। बीच का लम्बा नालवत् भाग योनिसूत्र Style बन गया होगा। नीचे का भाग बहुत बड़ा और पोला होकर बीजोत्पादक डिम्बों (Ovules) को धारण किया होगा, और गर्भाशय (Ovary) के नाम से प्रसिद्ध हुआ होगा। इस कल्पित विकास विधि का कुछ आभास हमें नग्न बीजी तथा आवृत्तबीजी पौधों पर तुलनात्मक विचार करने से मिलता है। साइकस नाम के पौधे में नारी भाग पत्रवत होता है और डिम्ब उसकी धार पर लगे रहते हैं। पाइनस में वे डिम्ब उसके पृष्ठ पर फैले रहते हैं, और पत्रवत रचना भी पूर्ववत् फैली रहती है। इस श्रेणी के अन्य पौधों में एक खात भी पाया जाता है, जो भिन्न-भिन्न गहराई का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं। ये व्यवधान लम्बवत् (Longitudinal) अथवा अनुप्रस्थ (trans verse) दोनों तरह के हो सकते हैं। शिम्बीवर्ग में (अमलतास) प्रायः अनुप्रस्थ व्यवधान होते हैं, जिनके कारण गर्भाशय नीचे से ऊपर तक बहुत सी कोठरिओं में बँटा रहता है। सर्षपवर्ग में ये मिथ्या व्यवधान लम्बवत् होते हैं। तीसी में पांच अपूर्ण व्यवधान डारसल स्यूचर से निकले होते हैं।

गर्भाशय के अन्दर डिम्ब (Ovules) भिन्न २ तरह से क्रमबद्ध रहते हैं। गर्भाशय के वेन्ट्रल जोड़ों पर प्रायः एक तन्तु होता है, जिसे प्लेसेन्टा कहते हैं। इसी को स्थिति के अनुसार बीजक्रम के भिन्न २ भेद होते हैं। एक पुष्पयोनि के साधारण गर्भाशय में प्रायः प्लेसेन्टा वेन्ट्रल स्यूचर पर होता है, और वहीं से बीज जुड़े हुए रहते हैं। इस प्रकार के बीज-क्रम (Placentation) को मार्जिनल (Marginal) अर्थात् धारीय कहते हैं। ऐसा बीजक्रम शिम्बीवर्ग में पाया जाता है। पोस्ता, पपीता तथा स्वर्ण क्षीरी में गर्भाशय एक कोष्ठी पर संयुक्त योनि होता है, और प्लेसेन्टा गर्भाशय के जोड़ों पर अथवा असम्पूर्ण व्यवधानों पर होता है। इनमें बीजक्रम पेराइटल (Parietal) कहा जाता है। बहुकोष्ठी गर्भाशय में सब प्लेसेन्टा बीच में परस्पर मिल जाते हैं, और प्रत्येक कोष्ठ में उस संयुक्त स्तम्भवत् प्लेसेन्टा के दो-दो भाग पाये जाते हैं, जिनसे बीज निकले रहते हैं। ऐसे बीजक्रम को आक्षीय (Axile) कहते हैं (भिण्डी, नीबू)। यदि बहुकोष्ठी गर्भाशय के व्यवधानों का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लोप हो जाय, और संयुक्त प्लेसेन्टा बीजों के साथ बीच में मौजूद रहे तो बीजक्रम स्वतन्त्राक्षीय (Free-central) हो जायगा। एककोष्ठी गर्भाशय में कहीं २ स्तम्भक का बढ़ा हुआ भाग संयुक्त आक्षीय प्लेसेन्टा की तरह बीजों को धारण किये रहता है। यहां भी बीजक्रम को स्वतन्त्राक्षीय ही कहते हैं। बीजक्रम के इन मुख्य भेदों के अतिरिक्त दो और भी भेद होते हैं। एक में प्लेसेन्टा केवल एक विन्दु पर होता है। वह विन्दु कहीं २ आधार पर होता है, जब बीजक्रम आधारीय (Basal) कहा जाता है, और कहीं-कहीं वह अग्र पर होता है, जब बीजक्रम को एपिकल (Apical) कह सकते हैं। दूसरे प्रकार के बीजक्रम में प्लेसेन्टा पार्श्वीय दिशाओं में इतना अधिक बढ़ जाता है, कि वह गर्भाशय की भीतरी दीवाल को पूर्णतः ढक लेता है, और इसके भीतरी पृष्ठ पर चारों ओर बीज लगे होते हैं। यहां बीजक्रम को सुपरफिशल Superficial कहते हैं।

गर्भाशय के अतिरिक्त पुष्प-योनि के शेषभाग अर्थात योनि-सूत्र और योनिछत्र के भी आकार, स्थिति आदि में बड़ा बाहुल्य पाया जाता है जिनका वर्णन यहां अनावश्यक प्रतीत होता है।

मौलिक पुष्प की रचना तथा अन्य प्रकार के पुष्पों की उत्पत्ति—चूंकि पुष्प शाखा का रूपान्तर माना गया है, इसलिये अवाधित विकास होने पर पुष्प के क्रम तथा रचना आदि उन्हीं नियमों के अनुसार होने चाहिये जो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शाखा तथा उसकी पत्तिओं के लिये बताये गये हैं। परन्तु विकासक्रम में अनेक प्रकार के परिवर्तन भी आवश्यकतानुसार होते गये हैं, जिससे वास्तव में जैसे २ पुष्प हमें मिलते हैं वे सब उन नियमों के आधार पर बनाये हुए कल्पित पुष्प से भिन्न होते हैं। हमारे कल्पित मौलिक पुष्प में चारों भाग होंगे। हर एक भाग के छोटे-छोटे अवयवों की संख्या बराबर तथा एक भाग के अवयव दूसरे समीप वाले भाग के अवयवों के एकान्तर होंगे। प्रत्येक के सब अवयव कद और आकार में समान, और आपस में एक दूसरे से अथवा दूसरे भाग के अवयवों से अलग होंगे। स्तम्भक शंकाकार या उन्नतोदर होगा। अब यदि पुष्पों में पाये जाने वाले भिन्न-भिन्न प्रकार के परिवर्तनों की जांच की जाय तो, वे सब निम्नरीति से श्रेणीवद्ध किये जा सकते हैं।

(१) अवयवों के आकार में परिवर्तन—अधिकतर पुष्प की रचना तारकाकार Stellate होती है। चारों चक्र नियमित और वृत्ताकार क्रम में पाये जाते हैं। ऐसे पुष्पों को नियमित (Regular) पुष्प कहते हैं। आकार में परिवर्तन प्रायः अतिवृद्धि, वहिरुद्भेद (त्रायमाण में दलपत्र का पुच्छ) या अपूर्ण विकास Abortion के कारण होता है। विछत्रलिंग अपूर्ण विकास से ही होते हैं। नियमित पुष्पों को एक्टिनोमार्फिक (Actinomorphic) कहते हैं। इन्हें कम से कम दो धरातलों में दो-दो समान भागों में बांट सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अनियमित पुष्पों में से कुछ तो एक धरातलमें दो समान भागों में बांटे जा सकते हैं, और कुछ एक धरातल में भी नहीं बाटे जा सकते। पहले प्रकार के पुष्पों को जाइगोमार्फिक (Zygomorphic) और दूसरे प्रकार के पुष्पों को एसिमेट्रिकल (Asymmetrical) कहते हैं।

(२) संख्या में परिवर्तन—संख्या में अधिकता प्रायः चक्रों की संख्या के बढ़ने से होती है (धतूर)। अवयव विभाजन के कारण भी संख्या बढ़ जाती है (एरण्ड के पुष्पलिंग)। संख्या में कमी किसी चक्र के अथवा उसके कुछ अवयवों के बिल्कुल विकास न होने के कारण आती है।

(३) अवयवों को स्थिति में परिवर्तन—प्रायः एक चक्र के अवयव दूसरे चक्र के अवयवों के एकान्तर होते हैं, परन्तु जब कोई चक्र दो भागों में बट जाता है, अथवा किसी चक्र का लोप हो जाता है; तो वे विपरीत मालूम होते हैं।

(४) अवयवों के रूपान्तर—इसकी चर्चा पहले की जा चुकी है।

(५) संश्लेष और संसक्ति के कारण होने वाले परिवर्तनों का भी वर्णन पहले हो चुका है।

फ्लोरल डायग्राम तथा फ्लोरल फार्मूला—

फ्लोरल डायग्राम (Floral diagram) में पुष्प कलिका के अनुप्रस्थ विच्छेद का चित्र होता है। इससे पुष्प के भिन्न-भिन्न भागों का पारस्परिक सम्बन्ध, संश्लेष तथा संसक्ति,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनके अवयवों की संख्या तथा क्रम आदि का पता चलता है। ये चित्र दो तरह के होते हैं। एक तो वास्तविक (Empirical) होता है, जिससे पुष्प की वास्तविक वर्तमान रचना का पता चलता है, और दूसरा काल्पनिक (Theoretical) होता है, जिसमें लुप्त अवयवों को भी दिखाया जाता है। इन चित्रों को सफलता पूर्वक बनानेवालों को पुष्प के भिन्न-भिन्न धरातलों का जानना आवश्यक है। पुष्पदण्ड के समीप वाले भाग को, जो पुष्पदण्ड के बीच में और उनके सीध में होता है, पोस्टीरियर (Posterior) कहते हैं, और जो भाग इसके विपरीत होता है, उसे एण्टीरियर (Anterior) कहते हैं। इन दोनों भागों के मिलाने वाले धरातल को मध्य धरातल (Median plane) कहते हैं। इससे समकोण बनाने वाले धरातल को पार्श्वीय धरातल (Lateral plane) कहते हैं, और ४५ डिग्री के कोण बनाने वाले धरातलों को कोणीय Diagonal धरातल कहते हैं।

भिन्न-भिन्न पुष्पों के फ्लोरल डायग्रामों की परीक्षा करने पर मालूम होता है, कि आवृत्त बीजी पौधों में प्रायः एक पुटपत्र पोस्टीरियर होता है। कहीं-कहीं इस पुटपत्र का अभाव भी होता है। शिम्बीवर्ग में दो पुट पत्रों को पोस्टीरियर कहते हैं। यद्यपि पुष्प लिंग और पुष्प योनिओं के स्थान का उनके विलक्षण आकार के कारण प्रायः निश्चय नहीं हो पाता, तो भी कभी-कभी पुष्पदण्ड और इन भागों के बीच

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

निश्चित सम्बन्ध देखा जाता है। जैसे कण्टकारी वर्ग (कटेरी, मकोय) में गर्भाशय का व्यवधान कोणीय धरातल में पाया जाता है। फ्लोरल फार्मूला में पुष्पदण्ड को सबसे ऊपर एक बिन्दु द्वारा, वृन्तपत्र को उसके विपरीत, और इन दोनों के बीच में भिन्न-भिन्न चक्रों को उतने ही एक केन्द्रीय वृत्तों द्वारा दिखलाया जाता है। संश्लेष तथा संसक्ति भी संयोजक अथवा बिन्दुमय रेखाओं द्वारा दिखाया जाता है। पुष्पपत्रों का क्रम तथा उनकी संख्या भी इन चित्रों में दिखा दी जाती है। वास्तविक चित्र में लुप्त भागों को बिन्दुओं द्वारा यथास्थान दिखला देने से वह चित्र काल्पनिक हो जाता है।

पुष्प की सभी बातें जिन्हें फ्लोरल डायग्राम द्वारा दिखा सकते हैं, पुष्प सूत्रों (Floral formula) द्वारा भी प्रगट की जाती हैं। पुष्पसूत्र बनाने में कुछ संकेतों का प्रयोग करना पड़ता है। पुटचक्र को प (K) दलचक्र को द (C); परि-सवर्ण को स (P) लिंगचक्र को ल (A) और योनिचक्र को य (G) अक्षरों द्वारा सूचित करते हैं। प्रत्येक चक्र के अवयवों की संख्या तत्सूचक अक्षर के बाद रख दी जाती है। अधिक तथा अनिश्चित संख्या के लिये ∞ चिन्ह का प्रयोग होता है। किसी संख्या को कोष्ठ में रखने से संसक्ति का बोध होता है। दो चक्रों के संश्लेष को दिखाने के लिये उनके ऊपर एक अर्द्धचन्द्राकार रेखा खींच देते हैं। योनिचक्र की संख्या

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के नीचे आड़ी रेखा खींचने से सुपीरियर और ऊपर खींचने से इन्फीरियर गर्भाशय का बोध होता है। कभी २ जब एक अक्षर के आगे दो संख्यायें रहती हैं, और उनके बीच में धन का चिन्ह रहता है, तो उससे यह समझा जाता है, कि वह भाग दो चक्रों में है जिनकी संख्यायें अलग-अलग दी गयी हैं। कंट-कारी वर्ग के पुष्पों का पुष्पसूत्र इस प्रकार का है:— $K_{(5)}\ \overparen{C_{(5)}\ A}_{5}\ G_{\underline{(2)}}$ इससे यह मालूम होता है कि पुटचक्र ५ संयुक्त पुटपत्रों का, दलचक्र ५ संयुक्त दलपत्रों का लिंगचक्र ५ पुष्पलिंगों का और इपीपेटलस योनिचक्र २ संयुक्त पुष्प योनिओं का और गर्भाशय सुपीरियर है।

अतः पुष्पसूत्र भी पुष्पों के परिचय करने में बहुत सहा-यक होते हैं और किसी पुष्प का विवरण बिना पुष्पसूत्र तथा उपर्युक्त चित्र के अपूर्ण समझा जाता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिच्छेद ६

सेचन क्रिया तथा गर्भाधान

(Pollination & fertilisation)

बतलाया जा चुका है, कि प्रत्येक जीवधारी के जीवन का प्रधान उद्देश अपने वंश को स्थायी बनाने का है। अतः वे कितनी ही क्षुद्र आकृतिवाले क्यों न हों, अर्थात् विकासक्रम में उनका कितना भी नीचा स्थान क्यों न हो, किसी न किसी प्रकार वे अपनी संतानोत्पत्ति अवश्य कर जाते हैं। वनस्पतिओं में सन्तानोत्पत्ति की साधारणतः तीन विधियां हैं। (१) वानस्पतिक (Vegetative) (२) अलैंगिक (Asexual) तथा (३) लैंगिक (Sexual)।

वानस्पतिक विधि :—जिन पौधों में सन्तानोत्पत्ति इस विधि से होती है, उनका कोई वानस्पतिक भाग अलग हो जाता है, और उससे जनक पौधे के समान एक नया पौधा तैयार हो जाता है। यह सन्तानोत्पादक भाग प्रायः एक विशिष्ट कलिका अथवा एक या एक से अधिक साधारण कलिकाओं से युक्त रहता है। इन कलिकाओं की वृद्धि के लिये जब अनुकूल अवस्थायें मिलती हैं, तो इनसे जड़ें निकल कर पृथ्वी में जाती हैं, और एक अंकुर निकल कर ऊपर की ओर बढ़ने लगता है। पहले कुछ समय तक केवल संचित भोज्य पदार्थों पर ही नवजात सन्तान की वृद्धि होती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

केला, बांस, हल्दी, प्याज, आलू तथा सूरण आदि में भौमिक तनों द्वारा सन्तानोत्पत्ति होती है, जिसकी चर्चा पहले ही की जा चुकी है। पथरकुचा, हिमसागर तथा बेगोनियां में पत्तिओं से नये पौधे बनते हैं। वाराहीकन्द में स्वतन्त्र कलिका Bulbil द्वारा वानस्पतिक सन्तानोत्पत्ति होती है।

(२) अलैंगिक विधि :—इसमें और पहली विधि में केवल इतना ही अन्तर है कि इसमें सन्तानोत्पादक भाग एकही कोष्ठ का होता है, जिसे स्पोर (Spore) कहते हैं. और पहली में वह बहुकोष्ठी होता है। इसके अतिरिक्त अलैङ्गिक सन्तानोत्पत्ति क्षुद्र वनस्पतिओं में ही पायी जाती है।

(३) लैंगिक विधि :—उच्च श्रेणी के, पुष्पवाले पौधों में वानस्पतिक तथा लैङ्गिक विधि से ही संतानोत्पत्ति होती है। इन दोनों में भी लैङ्गिक रीति प्रधान होती है, क्योंकि इससे एक तो बल और जीवनशक्ति (Vigour and vitality) का ह्रास नहीं होता, दूसरे सन्तानवृद्धि और पौधों का दूरदेशीय प्रसार अधिक और समुचित रूप से होता है।

लैंगिक सन्तानोत्पत्ति सम्बन्धी क्रियायें—

इस रीति से जहां भी सन्तानोत्पत्ति होती है वहां दो कोष्ठ आकर मिलते हैं, और उनके मिलने से जो नया कोष्ठ बनता है, उसी की वृद्धि से नवजात सन्तान का शरीर बनता है। क्षुद्र श्रेणी की वनस्पतिओं में इन दोनों कोष्ठों के रूप तथा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

व्यवहार में कुछ विशेष अन्तर नहीं होता। परन्तु ज्यों-ज्यों हम ऊपर चलते हैं, दोनों में अन्तर प्रकट होने लगता है, और तब एक को नरकोष्ठ Male cell और दूसरे को नारी कोष्ठ (Female cell) कहने लगते हैं। पुष्प वाले पौधों में जिन-जिन अवयवों में ये दोनों प्रकार के कोष्ठ बनते हैं, वे भी भिन्न २ तरह के होते हैं। इनमें पुष्प ही सन्तानोत्पादक भाग है। इसमें नर तथा नारी कोष्ठों को उत्पन्न करने वाले अवयव भिन्न २ होते हैं, और पुष्प लिंग तथा पुष्प योनि कहे जाते हैं। पुष्पलिंगों के पराग कोषों में परागकण होते हैं, जिनसे नर-कोष्ठ आते हैं, और पुष्पयोनिओं के गर्भाशयों में नारी कोष्ठ की उत्पत्ति होती है।

इन दोनों कोष्ठों के मिलने की क्रिया को गर्भाधान (Fertilisation) कहते हैं। चूंकि नारी कोष्ठ स्थायी होता है, इसलिये गर्भाधान के लिये यह आवश्यक है, कि पराग कण किसी तरह पुष्प योनिओं के सम्पर्क में पहुँचाये जायं। परागकणों के योनि छत्र पर, जो पुष्प योनि का एक भाग है, जाने या ले जाये जाने की क्रिया को सेचन क्रिया (Pollination) कहते हैं।

सेचन क्रिया दो प्रकार की होती है। एक में एक फूल का पराग दूसरे फूल की पुष्प योनि पर गिरता है, अथवा ले जाया जाता है। ऐसे सेचन को परसेचन Cross pollination कहते हैं। जब किसी पुष्प का पराग उसी पुष्प के योनिछत्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर गिरता है, या ले जाया जाता है, तो ऐसे सेचन को आत्म सेचन (Self Pollination) कहते हैं।

परसेचन और आत्मसेचन की तुलना— चूंकि आवृत्तबीजी पौधों में पुष्प अधिकतर द्विलिंगी होते हैं, अतः उनमें आत्मसेचन अवश्य ही अधिक सुगम होना चाहिये। परन्तु उनमें भी परसेचन ही अधिक होता है, यहां तक कि परसेचन के लिये उनमें अनेकों प्रकार की सुविधायें भी पायी जाती हैं। इससे प्रकट होता है कि पौधों को पर-सेचन से विशेष लाभ होता है। वनस्पतिविशारदों ने अब इस बात को प्रयोगों द्वारा सिद्ध कर दिया है कि परसेचन से बने हुए बीज अधिक पुष्ट और संख्या में अधिक होते हैं, और उनसे जो पौधे उगते हैं, वे जीवन संग्राम में अधिक सफल होते हैं। यह भी देखा जा चुका है कि यदि परसेचन दो भिन्न २ व्यक्तिओं के दर्मियान होता है, तो बीज उन पौधों के बीजों की अपेक्षा जिनमें परसेचन एक ही व्यक्ति के दो भिन्न २ पुष्पों के दर्मियान हुआ रहता है, अधिक पुष्ट और होनहार निकलते हैं। इसका कारण सम्भवतः यही है, कि दूसरे में नवजात सन्तान का जनक पौधा एक ही होता है, अर्थात् नर और नारी कोष्ठ वहां एक ही व्यक्ति से आते हैं, इसलिये उनके मिलने से जो सन्तान बनती हैं, उसमें पैत्रिक गुण केवल एक ही व्यक्ति से आते हैं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अर्थात् सन्तान में समान गुणों का ही सम्मिश्रण होता है। परन्तु पहले में गर्भाधान के समय भिन्न-भिन्न पैत्रिक गुणों का सम्मिश्रण होता है। अतः इस तरह से उत्पन्न की हुई सन्तान अधिक गुणों वाली होती है, और जीवन संग्राम में अपने अस्तित्व की अधिक सफलता के साथ रक्षा करती है।

परसेचन के साधन (Agencies of cross pollination) परसेचन वायु, जल तथा जन्तुओं की सहायता से होता है।

(१) वायु द्वारा परसेचन—जिन पुष्पों का सेचन वायु द्वारा होता है उन्हें वायुसिक्त (Anemophilous) कहते हैं। इन पुष्पों में अनेकों ऐसी विशेषतायें पायी जाती हैं, जो वायु सेचन के अनुकूल होती है। पुष्प छोटे, मधु तथा गन्ध रहित, तथा रूपरंग में भी आकर्षक नहीं होते हैं। पराग अधिक बनता है, और पराग-कण चिकने, हल्के तथा सूखे से होते हैं। योनिछत्र बड़ा और प्रायः इस प्रकार का होता है कि उड़ते परागकणों को पकड़ सके। इसीलिये यह कहीं २ सशाख (एरण्ड) और कहीं २ रोमश होता है। मक्का में योनिछत्र पर बहुत लम्बे-लम्बे रोम होते हैं, जो इन्हीं परागकणों के पकड़ने के निमित्त होते हैं। रोमश योनिछत्र गोधूम वर्ग में अधिक पाया जाता है। बहुत से वायु द्वारा सेचन कराने वाले पौधे पुष्प आने के पहले अपनी पत्तियां भी गिरा देते हैं, जिससे उनके कारण पराग वितरण में कोई बाधा न पड़े।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऐसे पुष्पों के लिंगछत्र प्रायः वर्सेटाइल होते हैं। पुष्पव्यूह प्रायः लम्बित अथवा विदण्डिक होता है जो हवा में आसानी से झूला करते हैं।

(२) **जल द्वारा सेचन**:—जल में होने वाले पौधे कुछ ऐसे होते हैं जिनका सेचन जल द्वारा होता है। इनके पुष्पों को जलसिक्त (Hydrophilous) कहते हैं। तालाबों में एक पौधा होता है, जिसे वैलिस्नेरिया स्पायरेलिस (Vallisnaria spiralis) कहते हैं। इसमें जल के द्वारा सेचन बड़ी विचित्र रीति से होता है। इसके कुछ पौधों पर केवल नर पुष्प और कुछ पौधों पर केवल नारी पुष्प होते हैं। नर पुष्प विनाल होते हैं, और जड़ के पास मूलीय पत्तिओं के मध्य में होते हैं। नारी पुष्पों के पुष्पनाल बहुत लम्बे सूत्रवत् और लपेटे हुए (Coiled) रहते हैं। जब नर पुष्प परिपक्व हो जाते हैं, तो जनक पौधे से अलग होकर पानी के ऊपर तैरने लगते हैं। उस समय नारी पुष्पों के पुष्पनाल भी फैल जाते हैं, जिससे वे भी पानी की सतह पर आ जाते हैं। जब दोनों प्रकार के पुष्प समीप २ आ जाते हैं, तो पराग कण जल द्वारा योनिछत्र पर पहुंच जाते हैं। सेचन के बाद नारी पुष्पों के पुष्पनाल फिर पूर्ववत् लपेट उठते हैं, और पुष्पों को जल के अन्दर खींच लेते हैं। फल जल के अन्दर ही तैयार होता है, और बीजोद्भेद भी अन्दर ही कीचड़ में होता है। इसी प्रकार अन्य कुछ पौधों का सेचन भी जल द्वारा होता है, परन्तु इतना ध्यान

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहे कि जल में होनेवाले प्रत्येक पौधे का सेचन जल द्वारा नहीं होता, बल्कि उनकी अधिक संख्या अपना सेचन कीड़ों अथवा हवा द्वारा ही करती है।

(३) **जन्तुओं द्वारा सेचन:**—यद्यपि चिड़िओं तथा घोंघा आदि की सहायता से भी परसेचन होता है पर ~~जन्तुसिक्त~~ जन्तु (Zoophilous) पुष्पों में कीटसिक्त (Entomophilous) पुष्प ही अधिक होते हैं, जिनका सेचन छोटे २ कीड़ों तथा मक्खिओं द्वारा होता है। कीटसिक्त पुष्प बड़े, सुन्दर, और प्रायः गन्ध युक्त होते हैं। उनके पुष्पव्यूह भी बहुधा आकर्षक होते हैं। पुष्पों के किसी न किसी भाग में प्रायः मधु भी बनता है। पराग इनमें अधिक नहीं बनता, क्योंकि कीड़ों के बदन में लगा हुआ पराग प्रायः व्यर्थ नहीं जाता। हवा में उड़ता हुआ पराग किसी स्थान पर गिर सकता है, परन्तु कीड़ों के बदन का पराग प्रायः पुष्पों पर ही गिरता है। इससे अधिक पराग की आवश्यकता इन पुष्पों को नहीं होती। केवल थोड़े से पौधों में, जिनके ऊपर कीड़े केवल पराग की ही लालच से जाते हैं, पराग अधिक बनता है (क्योंकि कुछ कीड़े पराग खाते भी हैं)। पराग कण प्रायः चिपचिपे (Sticky) होते हैं, जिससे कीड़ों के बदन में आसानी से चिपक जाते हैं।

कीटसिक्त पुष्पों में रचनात्मक भी अनेकों विशेषतायें होती हैं। जब कीड़े सुन्दरता, तथा सुगन्ध आदि से आकर्षित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होकर अथवा पराग वा मधु के लोभ से पुष्पों पर जाते हैं, उस समय पुष्प इन्हीं विशेषताओं द्वारा कीड़ों की गति (Movement) को अपनी सुविधानुसार अपने हाथ में रखता है, अर्थात् पुष्पों की ऐसी रचना होती है, कि कीड़े अपनी इच्छा पूर्त्ति किसी विशेष रीति से ही कर सकते हैं। सैलिवया के उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायगी। यह तुलसीवर्ग का पौधा है। इसमें दलचक्र द्विओष्ठी होता है। इसका अधोष्ठ (Lower-lip) बहुत ही दर्शनीय और इस प्रकार फैला रहता है, कि कीड़े आकर पहले उसी पर बैठते हैं। ऊर्ध्वोष्ठ ऊपर को ओर उठा हुआ और अग्र पर भीतर को ओर मुड़ा हुआ रहता है। पुष्पलिंग और पुष्पयोनिआं इसी के अन्दर छिपी रहती हैं। परागवाले पुष्पलिंग केवल दो होते हैं। इनमें लिंगसूत्र तो छोटा होता है, परन्तु संयोजक लम्बा और धनुषाकार होता है। दोनों संयोजकों के नीचे के भाग परस्पर मिले रहते हैं, पर ऊपर के स्वन्त्र होते हैं। उनके स्वतन्त्र अग्रों पर एक २ छत्र विच्छेद होता है। दूसरा अग्र उन दोनों का पराग रहित और चिपटा होता है। अधोष्ठ पर बैठे हुए कीड़े पुष्प के आधार भाग की ओर, जहां मधु रहता है, अपनी चोंच जब बढ़ाते हैं, तो मधुकोष के पहले ही संयोजकों का संयुक्त भाग बीच में पड़ जाता है, और चोंच के दबाव से वह उठ जाता है। इसलिये संयोजकों के ऊपरी स्वतन्त्र भाग अचानक कीड़ों की पीठ पर आकर टकर लेते हैं। इस समय संयोजक लीवर (Lever) का काम करता है। परागकोषों से पराग निकल कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उस समय कीड़ों की पीठ पर जमा हो जाता है। मधुकोष से कीड़ों के अपनी चोंच खींच लेने पर अथवा उनके चले जाने पर पुष्पलिंग फिर अपने स्थान पर आ जाते हैं। चूंकि पुष्प शुक्रपूर्व (Protandrous) होते हैं, इसलिये उनकी पुष्प योनिआं वाद में परिपक्व होती हैं, जब कि उनके पराग कीड़ों द्वारा पहले ही दूसरे पुष्पों पर पहुंचा दिये गये रहते हैं। परिपक्व होने पर योनिसूत्र नीचे को लटक जाता है। इसलिये जब फिर पराग से सने हुए कीड़े आते हैं, तो उनकी पीठ का स्पर्श उनके लटके हुए योनि छत्रों से ही होता है, और पराग योनिछत्रों पर पहुँच जाता है।

इस उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि पुष्पों और कीड़ों में कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसी घनिष्ठता का यह परिणाम हुआ है, कि बहुत से पुष्पों और कीड़ों का शारीरिक विकास भी एक दूसरे के अनुकूल हुआ है। अर्थात्, जैसे २ पुष्पों की रचना बदलती गयी है वैसे ही वैसे सेचन करने वाले कीड़ों की शारीरिक रचना भी बदलती गयी है।

परसेचनानुकूल अवस्थायें तथा रचनायें— पुष्पों में रचना सम्बन्धी अथवा अन्य बहुत सी ऐसी अवस्थायें देखने में आती हैं, जिनका अस्तित्व परसेचन के ही निमित्त माना जाता है। उनमें कुछ तो ऐसी होती हैं, जिनसे आत्म-सेचन में भी किसी प्रकार की बाधा नहीं पड़ती, परन्तु कुछ ऐसी होती हैं, जिनकी उपस्थिति में आत्मसेचन कठिनता से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हो पाता है। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसी भी अवस्थायें होती हैं, जिनमें आत्म सेचन हो ही नहीं सकता। बहुत से पौधों में पुष्प एकलिंगी होते हैं, और कुछ पौधों में एक पुष्प का पराग उसी पुष्प की पुष्पयोनि का गर्भाधान नहीं करा सकता। पुष्पों की इन दोनों अवस्थाओं को क्रमशः यूनीसेक्सवलिटी और सेल्फस्टेरिलिटी (Self-Sterility) कहते हैं। ये दोनों अवस्थायें पुष्पों को परसेचन के लिये वाध्य करती हैं।

कुछ पौधों में पुष्पलिंग और पुष्पयोनिआं भिन्न२ समय पर परिपक्व होती हैं, जिससे उनमें आत्म सेचन द्वारा वीज का बनना असम्भव ही होता है। पुष्पयोनिओं के परिपक्व होने पर ही योनिछत्र चिपचिपे (Sticky) होते हैं, और पराग कणों को ग्रहण कर सकते हैं। उसी समय उनमें शर्करा घोल तथा अन्य रासायनिक पदार्थ भी जो पराग कणों की वृद्धि में सहायक होते हैं, बनते हैं। शुक्रपूर्व (Protandrous) पुष्पों में, जहां पुष्पलिंग पहले परिपक्व होते हैं, जिस समय पराग कण परिपक्व होकर निकलते हैं, उस समय उनके योनिछत्र ग्राही (Receptive) अर्थात् पराग ग्रहण करने योग्य नहीं हुए रहते। इसलिये यदि पराग उन पर आता भी है, तो व्यर्थ जाता है। अतः इस बात की आवश्यकता होती है, कि वे परागकण किसी ऐसे पुष्प पर ले जाये जायँ, जिनकी पुष्पयोनिआं परिपक्व हो गयी हों। इसी तरह से रजोपूर्व

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(Protogynous) पुष्पों में जब योनिछत्र ग्राही होता है, तो उनके परागकण परागकोषों में बन्द रहते हैं, इसलिये गर्भाधान के लिये उन्हें दूसरे पुष्पों के पराग की आवश्यकता पड़ती है।

बहुत से पौधों में योनिसूत्र और लिंगसूत्र की लम्बाई में भी भिन्नता होती है। इस अवस्था को सूत्र-भिन्नता (Heterostyly) कहते हैं। बहुत से मंजिष्ठादिवर्ग के, तथा धातकी के पुष्पों में यह अवस्था पायी जाती है। इनमें प्रायः दो प्रकार के पुष्प होते हैं, जो भिन्न-भिन्न व्यक्तियों पर पाये जाते हैं। एक प्रकार के सब पुष्पों के लिंगसूत्र बड़े और योनिसूत्र छोटे होते हैं, और दूसरों में लिंगसूत्र छोटे और योनिसूत्र बड़े होते हैं। इसलिए एक ही पुष्प में अथवा एक ही प्रकार के दो पुष्पों में सेचन होना यद्यपि असम्भव नहीं मालूम होता, तो भी इतना अवश्य है, कि दो भिन्न-भिन्न प्रकार के पुष्पों में सेचन अधिक सुगमता से होता होगा, और इसलिये प्रायः यही होता भी है।

आत्मसेचन—बहुत से पौधों में यद्यपि साधारणतः परसेचन ही होता है, फिर भी यदि किसी कारण से उनमें परसेचन नहीं हो पाता तो उन्हें आत्मसेचन का ही आश्रय लेना पड़ता है। जो पुष्प शुक्रपूर्व तथा रजोपूर्व होते हैं, उनमें भी यदि दोनों भागों के परिपक्व होने के समयों में अधिक अन्तर नहीं होता, तो उनमें भी आत्मसेचन हो जाया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करता है । गेंदावर्ग में प्रायः परसेचन ही होता है, परन्तु परसेचन न होने पर उनके योनिसूत्र इस प्रकार झुक जाते हैं, कि योनिछत्र लिंगछत्रों को स्पर्श करने लगते हैं, और आत्म-सेचन हो जाता है। आत्मसिक्त पुष्पों में बहुत से पुष्पों को क्लिस्टोगैमश (Clistogamous) कहते हैं । ये पुष्प कभी नहीं खिलते। इनका पुटचक्र शेष भागों को इस प्रकार अन्त तक ढके रहता है, कि पराग को बाहर जाने का अथवा बाहर से भीतर आने का रास्ता नहीं मिलता। ऐसे पुष्प प्रायः जिन पौधों पर पाये जाते हैं, उनमें भी साधारण पुष्प होते हैं, जिनका सेचन कीड़ों द्वारा होता है। यदि किसी कारण से परसेचन नहीं होता तो आत्मसेचन को सहायता लेनी पड़ती है। ऐसी अवस्था मूंगफली में देखी जाती है।

गर्भाधान—इस क्रिया को भली प्रकार समझने के लिये रजोपेटी (Ovule) तथा परागकण की रचना का ज्ञान तथा गर्भाधान की तैयारी में होने वाले इनके अन्दर के परिवर्तनों की जानकारी बहुत आवश्यक है।

रजोपेटी या डिम्ब की रचना—यहां एक डिम्ब-वाले गर्भाशय का वर्णन किया गया है। रजोपटी गर्भाशय के अन्दर एक नाल द्वारा प्लेसेन्टा से जुड़ी रहती है। इस नाल को डिम्बनाल (Funiculus) कहते हैं। रजोपेटी एक अथवा दो आवरणों से, जो मोटी दीवाल वाले कोष्ठों की कई तहों से बने रहते हैं, ढकी रहती है। इन आवरणों को डिम्बा-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वरण (Integument) कहते हैं। केवल एक स्थान पर रजोपेटी के ऊपर आवरण नहीं होता। उस स्थान को सूक्ष्म-छिद्र (Micropyle) कहते हैं, जो परिपक्व डिम्ब अथवा बीज में भी पाया जाता है। इन आच्छादनों के अन्दर के तंतु को न्यूसेलस (Nucellus) कहते हैं। न्यूसेलस के जिस स्थान से दोनों आवरण निकलते हैं, उसे सन्धि-स्थान (Chalaza) कहते हैं, और जिस स्थान पर डिम्ब डिम्बनाल से मिलता है, उसे नालचिन्ह (Hilum) कहते हैं।

न्यूसेलस में सूक्ष्मछिद्र के समीप एक बड़ा कोष्ठ होता है जिसे गर्भकोष (Embryo sac) कहते हैं। इसका न्यू-क्लियस पहले दो भागों में विभक्त होता है, जो गर्भकोष के दोनों सिरों पर चले जाते हैं। ये दोनों फिर दो-दो बार विभक्त होकर कुल आठ न्यूक्लियस उत्पन्न कर देते हैं, जिनमें चार २ दोनों सिरों पर रहते हैं। इनमें से तीन-तीन तो अपने स्थान पर रह जाते हैं, पर दोनों सिरों से एक-एक आकर बीच में मिल जाते हैं, और सेकेन्डरी न्यूक्लियस (Secondary nucleus) बनाते हैं। हर एक सिरे पर के न्यूक्लियस जीवनमूल से घिर जाते हैं। सूक्ष्मछिद्र के समीप के तीनों कोष्ठों को अण्डयन्त्र (Egg apparatus) कहते हैं, जिसमें ऊपर के दो कोष्ठों को सहायक कोष्ठ (Help-cells) और नीचे के कोष्ठ को गर्भाकोष्ठ या नारीकोष्ठ (Egg cell) कहते हैं। यद्यपि इन तीनों रचनाओं को हम कोष्ठ कहते हैं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर इनमें कोष्ठावरण (Cell-wall) नहीं होते । विपरीत सिरे पर के तीनों कोष्ठों को ऐण्टीपोडल (Anti-podal) कोष्ठ कहते हैं। यद्यपि गर्भकोष के अन्दर इतना परिवर्तन हो जाता है, तो भी उसकी रचना एक साधारण कोष्ठ से बहुत मिलती जुलती है। इसमें पहले का कोष्ठावरण रहता ही है। इसका जीवन मूल भी कोष्ठावरण के समीप चारों ओर रहता है। सेकेण्डरी न्यूक्लियस के चारों ओर से जीवन-मूलीय सूत्र निकल कर किनारे के जीवनमूल से मिले रहते हैं।

भिन्न-भिन्न प्रकार की रजोपेटिओं में, नालचिन्ह, सन्धि-स्थान तथा सूक्ष्मछिद्र का पारस्परिक सम्बन्ध भिन्न २ होता है। डिम्बावरण भी कहीं एक, कहीं दो अथवा कहीं कहीं तीन भी होते हैं। बहुत साधारण प्रकार की रजोपेटी में सन्धिस्थान और नालचिन्ह बहुत समीप २ होते हैं, और सूक्ष्मछिद्र, नाल-चिन्ह तथा न्यूसेलस की अक्ष तीनों एक सीधी रेखा में पाये जाते हैं। ऐसी रजोपेटी को आर्थोट्रापस (Orthotropous) कहते हैं। दूसरी प्रकार की रजोपेटिओं में इसका उलटा होता है। रजोपेटी की वृद्धि एक ओर की अपेक्षा दूसरी ओर इतनी अधिक होती है, कि सन्धिस्थान नालचिन्ह से हटकर दूसरी ओर चला जाता है, और सूक्ष्मछिद्र, नालचिन्ह तथा पहली प्रकार की रजोपेटिओं का शीर्ष एक जगह हो जाता है। ऐसी वृद्धि में न्यूसेलस का अक्ष सीधा रह जाता है, और डिम्बनाल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उससे एक ओर मिल जाता है। इस संयुक्त भाग को रेफ (Raphes) कहते हैं। इस प्रकार की रजोपेटी ककड़ियों में पायी जाती है, और एनाट्रापस (Anatropous) रजोपेटी के नाम से प्रसिद्ध है। इन दोनों के बीच की अवस्था तीसरे प्रकार की रजोपेटिओं में मिलती हैं। यहां भी न्यूसेलस सीधा ही रह जाता है, पर इसका अक्ष डिम्बनाल से समकोण बनाता है। इसमें भी एक छोटा रेफ होता है। चौथी प्रकार की रजोपेटिओं में न्यूसेलस इतना टेढ़ा हो जाता है, कि सूक्ष्मछिद्र, नालचिन्ह तथा संधिस्थान सब समीप २ आ जाते हैं। इनमें रेफ नहीं होता। तीसरी प्रकार की रजोपेटी को ऐम्फीट्रापस (Amphitropous) और चौथी प्रकार की रजोपेटी को कैम्पिलोट्रापस (Campylotropous) कहते हैं।

परागकण और उसका उद्भेद:—परागकण एककोष्ठी होते हैं। उनका आकार प्रायः एक साधारण कोष्ठ से मिलता है, परन्तु उनके आकार, क़द तथा रङ्ग आदि में बड़ी विभिन्नता भी पायी जाती है। इनमें साधारणतः दो आवरण होते हैं। बाहरी आवरण (Extine) क्यूटीन-स्तर से बना होता है और भीतरी सेलुलोज़-स्तर का बना होता है। अन्तरावरण (Intine) प्रायः चिकना, बारीक और पारदर्शक होता है, पर बाह्यावरण कठोर होता है, और इसका पृष्ट कणमय, कण्टकित तथा पाशवत रचनावाले बहिरुद्भेदों से युक्त होता है। रङ्ग में परागकण पीला, लाल, नीला, काला, तथा श्वेताभ हो सकता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। आकार में वे प्रायः गोल होते हैं, पर कभी २ त्रिभुजाकार, बहुभुजाकार, शंक्वाकार नलिकाकार तथा सूत्राकार परागकण भी देखने में आते हैं। परागकणों में छोटे २ छिद्र (Slit) भी होते हैं जो प्रायः एकदली में एक और द्विदली में तीन की संख्या में होते हैं।

परागकोषों से निकलने के पहले ही इनका न्यूक्लियस प्रायः दो भागों में बट जाता है। इन दोनों में छोटे भाग को, जो बड़े के अन्दर होता है और कुछ जीवनमूल के साथ एक आवरण के अन्दर घिर जाता है, उत्पादक-कोष्ठ (Generative cell) कहते हैं। दूसरे भाग को वानस्पतिक कोष्ठ (Vegetative cell) कहते हैं। सेचन के पहले ही अथवा योनिछत्र पर पहुँच जाने के बाद उत्पादक-कोष्ठ के दो भाग हो जाते हैं जिनको नरकोष्ठ (Male cells) कहते हैं। इस बार इन नर-कोष्ठों में आवरण नहीं होते।

इसके बाद परागकण में जितने परिवर्तन होते हैं वे सब योनिछत्र पर ही होते हैं। योनिछत्र से निकले हुए पोषक घोल को पाकर परागकणों के अन्दर एक नवीन वृद्धिशक्ति आ जाती है। उनके अन्दर का जीवनमूल किसी एक छिद्रों पर आवरण को फाड़ कर बाहर निकल आता है, और नलिकाकार हो जाता है। इस भाग को परागनलिका (Pollen-tube) कहते हैं। यह नलिका योनिछत्र और योनिसूत्र के तन्तुओं में से होते हुए गर्भाशय के अन्दर पहुंचती है। वहां पहुँच कर यह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रायः सूक्ष्मछिद्र से होकर न्यूसेलस में जाती है, और अण्ड यन्त्र के बहुत निकट आ जाती है। तबतक दोनों नरकोष्ठ और वानस्पतिक कोष्ठ का न्यूक्लियस भी उस नलिका के अग्र तक आ जाता है। कहा जाता है कि सहायक कोष्ठों में जीवन-मूल तो कम होता है, पर कोष्ठरस (Sap) बहुत होता है। परागनलिका इसका शोषण करके बहुत फूल जाती है, और अन्त में फट भी जाती है। इसके बाद एक नरकोष्ठ नारीकोष्ठ से जाकर मिल जाता है, और दोनों के मिलने से जो नया कोष्ठ बनता है, उसीको ऊस्पोर (Oospore) कहते हैं। यह बनते ही सेलुलोज़ के आवरण से घिर जाता है। नवजात सन्तान इसी एक कोष्ठ के रूप में पहले-पहल उत्पन्न होती है। उपर्युक्त प्रकार से नर और नारी कोष्ठों के मिलने की क्रिया को ही गर्भाधान कहते हैं। बहुत से पौधों में दूसरा नरकोष्ठ सेकेन्डरी-न्यूक्लियस से मिलकर इण्डोस्पर्म न्यूक्लियस (Endosperm nucleus) की सृष्टि करता है। इस संयोग को कभी-कभी पुनर्गर्भाधान (Double fertilisation) कहते हैं, क्योंकि इण्डोस्पर्म न्यूक्लियस दो बार दो-दो कोष्ठों के मिलने से प्राप्त होता है। वानस्पतिक कोष्ठ का न्यूक्लियस नष्ट हो जाता है।

गर्भाधान के बाद गर्भकोष तथा गर्भाशय में परिवर्तन—गर्भाधान हो जाने पर गर्भकोष तथा गर्भाशय में अनेक प्रकार के परिवर्तन होने लगते हैं। इन समस्त परिवर्तनों के फल स्वरूप हमें फल तथा बीज की प्राप्ति होती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गर्भाधान हो जाने पर ऊस्पोर बड़े वेग से बढ़ने लगता है. और इसके बार-बार विभक्त होने से एक कोष्ठपुंज बन जाता है, जिसे गर्भ (Embryo) कहते हैं। साथ ही सेकेन्डरी न्यूक्लियस बार-बार विभक्त होकर बहुत से न्यूक्लियस बना लेता है, जो क्रमशः जीवनमूल और आवरणों से घिर कर एक तंतु में बदल जाते हैं, जिसे इन्डोस्पर्म कहते हैं। गर्भकोष की वृद्धि के लिये प्रसेरटा से होकर भोज्य-पदार्थ लगातार गर्भाशय के अन्दर आता रहता है। इसी में का कुछ अंश निशास्ता (Starch) एल्यूरोन कण तथा तैल आदि के रूप में इन्डोस्पर्म के कोष्ठों में भी भर जाता है, जो बीजोद्भेद के समय काम देता है। गर्भ में जो वेग के साथ वृद्धि और रचना भेद होता रहता है, उसके कारण प्रारम्भिक जड़ (Radicle), गर्भकलिका (Plumule) तथा बीजपत्र नामक रचनाओं की उत्पत्ति हो जाती है।

इन्डोस्पर्म और गर्भ के बढ़ जाने से गर्भकोष भी बहुत अधिक बढ़ जाता है, और न्यूसेलस क्रमशः नष्ट हो जाता है। रजोपेटी के आच्छादन भी सूखकर कड़े हो जाते हैं, और बीजावरण (Testa) कहे जाने लगते हैं। स्वयं रजोपेटी को बीज कहने लगते हैं। प्रायः एक दली और बहुत से द्विदली पौधों में भी गर्भ के साथ इन्डोस्पर्म स्थायी रूप से मौजूद पाया जाता है, परन्तु बहुत से द्विदली तथा कुछ एकदली पौधों में भी, भोज्य पदार्थों का संचय बीजपत्रों के ही अन्दर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होता है और इन्डोस्पर्म का सर्वथा अभाव पाया जाता है। कुछ थोड़े से पौधों में न्यूसेलस का पूर्ण नाश नहीं होता। उसका थोड़ा सा भाग गर्भ के चारों ओर मौजूद रहता है, और इसके कोष्ठ भोज्य पदार्थों से भरे रहते हैं। इस अवशिष्ट भाग को गर्भावरण (Perisperm) कहते हैं। यह तंतु काली मिर्च में पाया जाता है।

गर्भाधान से जो उत्तेजना मिलती है, वह गर्भकोष के ही वृद्धि का कारण नहीं होती, वरन् वह गर्भाशय तथा पुष्प के अन्य भागों में भी वृद्धिशक्ति का संचार कर देती है, जिससे गर्भाशय अनेक प्रकार के परिवर्तनों के बाद फल का रूप धारण कर लेता है। प्रायः परिपक्व गर्भाशय को ही हम फल कहते हैं, जिसका बीज को सुरक्षित रखना और उपयुक्त समय पर बीजप्रसार करा देना ही मुख्य कार्य माना गया है।

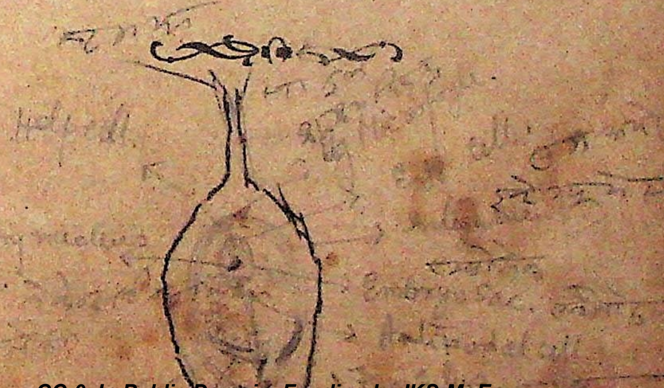

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिच्छेद ७

फल तथा बीज।

पौधों की जिस रचना को हम फल मानते हैं, वह प्रायः परिपक्व गर्भाशय ही होता है। कहीं २ पुष्प के अन्य भाग भी फल के बनने में सहायता पहुंचाते हैं। पहले प्रकार के फलों को वास्तविक फल (True fruits) और दूसरे प्रकार के फलों को सूडोकार्प (Psuedocarp अथवा false fruit) कहते हैं। नासपाती, सेव तथा तरबूज में स्तम्भक, तुलसीवर्ग, बाह्ता, सागोन, बैगन तथा मकोय में पुटचक्र, भल्लातक में पुष्पदण्ड तथा बरगद, गूलर, तून और अनानास में सम्पूर्ण पुष्पव्यूह फल के बनने में हाथ बटाते हैं। इसलिये इन सब फलों को सूडोकार्प कहते हैं।

जबतक गर्भाशय फल का रूप धारण करता है, तबतक उसमें बहुत से महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो जाते हैं। इस समय बहुत से गर्भाशयों में अनुप्रस्थ अथवा लम्बवत् व्यवधान (False septum) बन जाते हैं, जो पूर्ण (गोक्षुर) अथवा अपूर्ण (धतूर) होते हैं। इसके अतिरिक्त कभी २ गर्भाशय के कुछ भागों का लोप भी हो जाता है। जैसे वर्च में गर्भाशय दो कोष्ठ तथा दो डिम्बवाला होता है, पर फल एक कोष्ठ तथा एक बीज का रह जाता है। नारियल में गर्भाशय त्रिकोष्ठी होता है, पर फल एक ही कोष्ठ का होता है। गर्भाशय के कुद

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में तो वृद्धि सभी पौधों में हो जाती है। फल में मांसल और खाद्य भाग जो पीछे से बनता है, और फल को बहुत बढ़ा देता है, वह प्रायः गर्भाशय, फल की दीवाल (आम), प्लेसेन्टा (टोमाटो और शन्तरा) तथा स्तम्भक (सेव, नासपाती) से बना होता है।

फल बनने के बाद फल की दीवाल गर्भाशय की दीवाल से प्रायः बहुत भिन्न हो जाती है। कभी तो वह सूखी और पतली रह जाती है, और कभी वह चर्मवत् मालूम पड़ती है। कहीं तो वह बहुत कठोर होती है, और कहीं मांसल तथा रसदार हो जाती है। फल की दीवाल को पर्यावरण (Pericarp) कहते हैं। बहुत से फलों में यह तीन स्पष्ट तहों में अलग २ की जा सकती है। जैसे आम तथा बेर में ऊपर की तह चर्मवत होती है, और इपीकार्प (Epicarp) कही जाती है। बीच की मांसल तह मीज़ोकार्प (Mesocarp) और अन्दर की पाषाणवत् कठोर तह इण्डोकार्प (Endocarp) कही जाती हैं। बादाम तथा अखरोट में ये तीनों तहें न्यूनाधिक स्पष्ट होती हैं, पर अधिक पौधों में ये तीनों स्पष्ट रूप से अलग २ नहीं की जा सकतीं। बादाम में इण्डोकार्प पतला पर कठोर होता है, जिसके ऊपर शेष दोनों तहें मिलकर एक हरा पर्दा बनाये रहती हैं। अखरोट में इण्डोकार्प बहुत कड़ा होता है, और शेष दोनों तहें मिलकर हस्क (Husk) बनाती हैं।

फलों का स्फोटन :— कुछ परिपक्व फलों के सूख

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जाने पर उनकी दीवाल इसलिये फट जाती है, कि उनके बीज निकल कर अपना बीजोद्भेद कर सकें। जिन फलों में बीज-प्रसार की सुविधायें मौजूद रहती हैं, वे प्रायः अपना स्फोटन नहीं करते। उनके बीज अकस्मात् फल से अलग हो जाते हैं, अथवा बीजोद्भेद के समय फल सड़ जाता है, तब वे अङ्कुरित होते हैं। अतः स्फोटी फलों में बीजप्रसार का कार्य बीजों ही द्वारा सम्पादित होता है, जो बीजप्रसार के निमित्त भिन्न २ प्रकार की आकृतिक सुविधाओं से सुसज्जित रहते हैं। इस श्रेणी के कुछ फलों का स्फोटन ही इस प्रकार का होता है, कि उसके कारण कुछ न कुछ बीजप्रसार हो जाता है। कुछ फलों में उनका अग्रभाग कपाट की तरह आधार भाग से अलग हो जाता है, अर्थात् अनुप्रस्थ धरातल में फल दो भागों में टूट जाता है। ऐसे स्फोटन को अनुप्रस्थ (Transverse) स्फोटन कहते हैं। पोस्ते में अग्रभाग पर चारों ओर दीवाल में छोटे २ छिद्र बन जाते हैं, और जब फल हवा के झोंके में इधर-उधर झूलता है, तो बीज एक २ करके निकल २ कर ज़मीन पर गिर जाते हैं। ये छिद्र कहीं २ आधार पर भी होते हैं। ऐसे स्फोटन को छिद्रल (Porous) स्फोटन कहते हैं। अधिकतर फलों का लम्ब स्फोटन होता है। वे डार्सल, वेन्ट्रल अथवा कहीं २ दोनों जोड़ों पर लम्बवत् फट जाते हैं। ऐसा स्फोटन जब आंशिक होता है, तो अग्र पर बहुत से दांत बन जाते हैं, और स्फोटन दन्त-स्फोटन के नाम से प्रसिद्ध होता है, परन्तु कहीं २

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पूर्ण लम्बवत् स्फोटन भी होता है। वहां फल कई लम्बवत् टुकड़ों में अलग हो जाता है।

संयुक्त गर्भाशय से बने हुए बहुकोष्ठी फलों का स्फोटन तीन तरह से होता है। सेप्टीसाइडल (Septicidal) जब फल वेंट्रल जोड़ों पर फटता है, अर्थात् प्रत्येक व्यवधान दो दो भागों में फटकर अपने-अपने बीजों के साथ एक दूसरे से अलग हो जाता है (कालिचकम)। (२) लाक्युलिसाइडल (Loculicidal) जब फल डार्सल जोड़ों पर फटता है, और उसके लम्बवत् टुकड़े मध्य अक्ष से अलग हो जाते हैं, और व्यवधानों को भी अपने साथ रखते हैं। (३) सेप्टीफ्रेगल (Septifragal) जब फल दो में से किसी एक प्रकार के जोड़ों पर फटे, और साथ ही साथ व्यवधान भी मध्य अक्ष से टूटकर अलग हो जायं, जिससे बीज प्लेसेन्टा के साथ बीच में ही रह जायं (धतूर)।

फल के भेदः—फल (१) साधारण Simple (२) सामूहिक Aggregate तथा (३) पुष्पव्यूही Composite तीन तरह के होते हैं। साधारण फल ऐसे पुष्पों से बने होते हैं, जिनका योनिचक्र एक योनि अथवा संयुक्त-योनि होता है। सामूहिक फल भी एक ही पुष्प से बनता है, पर उसमें पुष्प-योनियां स्वतन्त्र होती है। पुष्पव्यूही फल एक पुष्प व्यूह से बना होता है। साधारण फलों में कुछ ऐसे होते हैं जिनका पर्योल शुष्क और दृढ़ होता है, और कुछ ऐसे होते हैं,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जिनमें पर्योत्व रसदार तथा मांसल होता है। पर उनके बीज फलों को शुष्क (Dry) और दूसरे प्रकार के फलों में बीज-(Succulent) फल कहते हैं। शुष्क साधारण फलोत्पन तीन प्रकारके हो सकते हैं, अर्थात् (१) एकीनियल (Achenial) (२) कैप्सुलर (Capsular) (३) और साइज़ोकार्पिक (Schizocarpic)।

एकीनियल फल अनस्फोटी तथा एकबीजी होते हैं। इस श्रेणी में पांच प्रकार के फल होते हैं। (१) एकीन (Achene) उस फल को कहते हैं, जो सुपीरियर गर्भाशय से बना रहता है, और जिसका पेरिकार्प बीजावरण से अलग, चर्मवत् अथवा झिल्ली के समान होता है जैसे बरगद का बीज। (२) सिप्सेला (Cypsela) उसे कहते हैं जो एकीन के समान होता है पर इन्फीरियर गर्भाशय से बना होता है। गेंदा वर्ग का यह लाक्षणिक फल है। प्रसार के निमित्त इसमें प्रायः पैपस भी होता है। (३) कैरियोप्सिस (Caryopsis) यह एकीन से केवल इस बात में भिन्न होता है कि इसका पर्योत्व बीजावरण से मिला रहता है। गोधूम वर्ग में जौ, गेहूँ, मक्का आदि के दाने यद्यपि बीज समझे जाते हैं, पर वस्तुतः वे इसी श्रेणी के फल होते हैं। (४) समारा (Samara) इसमें फल के दोनों ओर पेरिकार्प पंखवत् फैला रहता है, जिससे वायु द्वारा प्रसार में सहायता मिलती है। चिरबिल्व में ऐसा फल मिलता है। (५) नट (Nut) इसमें पर्योत्व बहुत कड़ा होता है, और इसकी भिन्न-भिन्न तहें एक दूसरे से अलग

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं होती। इन फलों के साथ प्रायः क्यूप्यूल (Cupule) नाम की एक रचना होती है, जो वृन्तपत्रकों के मिलने से बनी होती है। यह अंशतः अथवा पूर्णतः फल को ढके रहती है, और साधारतः हस्क के नाम से प्रसिद्ध है। एकार्न और चेस्टनट इसके उदाहरण हैं।

कैप्सुलर फल स्फोटी तथा बहुबीजी होते हैं इस श्रेणीके अन्दर पांच प्रकार के फल होते हैं। (१) एकस्फोटी (Follicle) यह फल एक योनि गर्भाशय से बना होता है, और सूखने पर प्रायः वेंट्रल जोड़ पर ही फटता है। साधारण एकस्फोटी फल प्रायः नहीं पाये जाते। सामूहिक फल के छोटे २ फल प्रायः ऐसे होते हैं। (२) युग्मस्फोटी (Legume अथवा Pod) इन फलों में स्फोटन दोनों जोड़ों पर होता है। शिम्बीवर्ग का यह लाक्षणिक फल है। आकारविभिन्नता इनमें बहुत होती है। (३) सिलिका (Siliqua) यह फल सुपीरियर गर्भाशय से बना हुआ, लम्बा, पतला और मिथ्याव्यवधान के कारण दो कोष्ठों का होता है। स्फोटन के समय पेरिकार्प दोनों जोड़ों पर फट कर दो भागों में दोनों तरफ अलग हो जाता है। बीज दोनों पेराइटल प्लेसेन्टा से जुड़े रहते हैं और बीच में मिथ्या व्यवधान फैला रहता है। सर्षपवर्ग का यह लाक्षणिक फल है (४) सिलिकुला (Silicula) यह सिलिका का रूपान्तर मात्र है। सिलिका की अपेक्षा छोटा और मोटा होता है। यह भी सर्षपवर्ग में ही पाया जाता है। (५) कैप्स्यूल (Capsule)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अन्य जितने स्फोटी बहुवीजी फल हैं और संयुक्त, एककोष्ठी या बहुकोष्ठी गर्भाशय से बने हैं, सब इसी श्रेणी में रखे जाते हैं। इन सब का स्फोटन भिन्न २ तरह से होता है, जिसका वर्णन पहले ही किया जा चुका है। अहिफेन, चिरायता तथा ब्राह्मी आदि वर्गों में इसी प्रकार के फल पाये जाते हैं।

साइज़ोकार्पिक फल भी यद्यपि स्फोटी और बहुवीजी होते हैं, पर इनका स्फोटन भिन्न रीति से होता है। ये लम्बवत् अथवा अनुप्रस्थ धरातल में एकवीजी भागों में अलग हो जाते हैं, जो मेरिकार्प (Mericarp) कहे जाते हैं। वीजोद्भेद के समय इन एकवीजी भागों के पेरिकार्प सड़ जाते हैं, तभी वीज अङ्कुरित होता है, अर्थात् ये मेरिकार्प प्रायः अस्फोटी होते हैं। इस श्रेणी में भी पांच प्रकार के फल सम्मिलित हैं।

(१) लोमेन्टम् (Lomentum) इन फलों के लक्षण वे ही होते हैं, जो लेग्यूम और सिलिक्वा के हैं। अन्तर केवल स्फोटन विधि में है। निकटस्थ वीजों के बीच में फल पतला होता है, और वहीं वह टूटता है। ये फल भी शिम्बी तथा सर्षपवर्गों में पाये जाते हैं।

(२) Cremocarp क्रीमोकार्प यह गर्जरादि वर्ग का लाक्षणिक फल है। यह दो पुष्पयोनि वाले संयुक्त द्विकोष्ठी इन्फीरियर गर्भाशय से बनता है, और लम्बवत् फट कर दो भागों में बट जाता है, जो कुछ समय तक द्विभक्त कार्पोफोर से जुड़े रहते हैं। प्रत्येक कोष्ठ में एक-एक वीज होते हैं, जो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शीर्ष भाग से निकले रहते हैं। (३) कार्सेरुलस (Carcerulus) यह फल तुलसी-वर्ग में पाया जाता है, और द्वियोनि, पर मिथ्याव्यवधान के कारण चार कोष्ठवाले गर्भाशय से बना होता है। फल चार एकबीजी भागों में बट जाता है। इनमें गर्भाशय के सब कोष्ठ पहले योनिसूत्रों द्वारा एक दूसरे से बीच में मिले होते हैं, और स्फोटन के समय एक दूसरे से अलग हो जाते हैं। (४) रेग्मा (Regma) ऊपर के फलों से इसमें यही विशेषता होती है, कि इसके मेरिकार्प स्फोटी होते हैं और इसीलिये काक्सी (Cocci) कहे जाते हैं। ऐसा फल एरण्ड में पाया जाता है। (५) संयुक्त समारा (Compound-Samara) यहां सम्पूर्ण फल कई समारा का बना होता है अर्थात् उसके मेरिकार्प एक-एक समारा होते हैं। मैपुल (Maple) में प्रत्येक फल दो समारा का समूह होता है।

साधारण मांसल फल—इस श्रेणी में तीन प्रकार के फल हैं। (१] ड्रूप (Drupe) इन फलों का पेरिकार्प तीन स्पष्ट भागों में विभक्त रहता है। इन्डोकार्प बहुत कड़ा होता है, और मीज़ोकार्प मांसल तथा रसदार होता है। इपीकार्प पतले चर्मवत् परदे के रूप में होता है। यह एकयोनि अथवा संयुक्तयोनि गर्भाशय से बना होता है, इसलिये यद्यपि ऐसा फल प्रायः एकबीजी तथा एककोष्ठी ही होता है, पर कभी २ बहुकोष्ठी तथा बहुबीजी ड्रूप भी पाये जाते हैं। बेर में प्रायः एक से अधिक बीज होते हैं, और एक ही इन्डोकार्प के अन्दर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहते हैं । कुछ बहुबीजी ड्रूपों के बीज पृथक-पृथक इन्डोकार्पों से घिरे रहते हैं, पर इनमें मीज़ोकार्प एक ही होता है। इस विशेषता के कारण ऐसे फल पाइरीन (Pyrene) भी कहे जाते हैं। एकयोनि गर्भाशयों से बने हुए ड्रूप आम तथा बेर के होते हैं, और अखरोट तथा नारियल के फल संयुक्तगर्भाशयों से बने होते हैं। बादाम, नारियल तथा अखरोट में मीज़ोकार्प सौत्रिक (Fibrous) होता है, और बादाम के मीज़ोकार्प में तो कड़ापन भी होता है। अखरोट में इपीकार्प और मीज़ोकार्प दोनों एक पतले छिलके के समान होते हैं, और इन्डोकार्प दो खण्डों का और कठोर होता है, जिसके भीतरी पृष्ठ से बहिरुद्भेद निकलकर इतनी दूर तक बढ़े रहते हैं, कि बीज कई खण्डों में बटा हुआ मालूम होता है। नारियल में मीज़ोकार्प सौत्रिक होता है, और उसका खाद्य-भाग बीज के इन्डोस्पर्म से बना होता है।

बेरी (Berry)—इसमें पेरिकार्प की तीनों तहें अलग भी हो सकती हैं और नहीं भी। परन्तु यहाँ इन्डोकार्प कठोर कभी नहीं होता। फल एकयोनि अथवा बहुयोनि संयुक्त, इन्फीरियर अथवा सुपीरियर गर्भाशय से बना होता है, और इसके एक अथवा अनेक बीज लुब्दीतुल्य मांसल भाग में छिटके रहते हैं। प्रामाणिक बेरी में मांसल भाग प्लेसेन्टा से बने रहते हैं। पहले बीज प्लेसेन्टा से जुड़े रहते हैं, पर वे बाद में अलग होकर मांसल भाग में छिटक जाते हैं। इस श्रेणी के कुछ विशेष

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकार के फलों के विशेष नाम हैं, जैसे कूष्मांड वर्गकी ककड़िओं को पेपो (Pepo) कहते हैं। इनमें बीजों का सम्बन्ध प्लेसेन्टा से कभी नहीं टूटता। नीबू, शंतरा तथा इस वर्ग के अन्य फलों को हेस्पेरीडियम (Hesperidium) कहते हैं। इनमें पेरिकार्प आसानी से अलग कर दिया जा सकता है। इसकी सबसे भीतरी तह से बहुत से पतले बहिरुद्‌भेद व्यवधानों के रूप में भीतर की ओर निकले रहते हैं। बीज मांसल भाग में धंसे रहते हैं और कोष्ठों के भीतरी कोणों पर जुड़े रहते हैं। छुहारा तथा खजूर के फलों को भी एक बीजी बेरी कहना चाहिये, क्योंकि इनका कठोर भाग इन्डोकार्प से नहीं बना होता, बल्कि वह स्वयं बीज होता है। इन्डोकार्प का एक पतला परदा मौजूद रहता है।

पोम (**Pome**)—यह इन्फीरियर गर्भाशय से बनता है, जो दो से अधिक कोष्ठों तथा बीजों से युक्त रहता है। इनमें पुष्पयोनिओं से बना हुआ भाग मांसल स्तम्भक से घिरा रहता है। इसका बाहरी छिलका तथा मांसल भाग बीज रहित होता है, क्योंकि ये भाग स्तम्भक से बने होते हैं। मध्य का कुछ बड़ा भाग पुष्पयोनिओं से बना होता है। गुलाब वर्ग में इस प्रकार के फल पाये जाते हैं। सेब तथा नासपाती इसके उदाहरण हैं।

सामूहिक फल—यह उन छोटे-छोटे फलों का समूह मात्र होता है, जो पुष्प के स्वतन्त्र गर्भाशयों से बने होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इन्हीं छोटे-छोटे फलों की रचना के आधार पर इन सामूहिक फलों का वर्गीकरण किया जाता है। सामूहिक फल प्रायः एकीन, ड्रूप तथा एक स्फोटी (Follicle) फलों के समूह होते हैं। रसभरी (Raspberry) तथा ब्लैकबेरी में फल ड्रूपों का समूह होता है। एकीन और फालिकिल के समूह प्रायः अतीस तथा गुलाब के वर्गों में पाये जाते हैं। देवकांडर स्ट्राबेरी तथा जंगली गुलाब में एकीनों का सामूहिक फल होता है। अतीस, त्रायमाण तथा मदार में फालिकिल के समूह होते हैं।

पुष्पव्यूही फल—इन फलों के बनने में प्रायः पुष्पों के अनावश्यक भाग तथा वृन्तपत्र भी सम्मिलित हो जाते हैं। तूत, ~~कटहल~~, अनानास, अंजीर आदि इसके उदाहरण हैं। कटहल में बीच का जो मूसला होता है, वह वास्तव में पुष्प दण्ड है। जो कोये खाये जाते हैं, वे उसपर के विनल पुष्प हैं जिनमें नारी भाग और पेरियंथ पत्र होते हैं। खाद्यभाग पेरियंथ पत्रों का ही होता है। फल के ऊपर जो नोकीले दांत होते हैं, वे इन्हीं पुष्पों के अग्रभाग हैं। तूत में भी मांसल भाग मुख्यतः पुटचक्रों का होता है। इन सब फलों को सोरोसिस (Sorosis) कहते हैं। दूसरे प्रकार के पुष्पव्यूही फल वट तथा अंजीर में मिलते हैं। यहां पुष्पदण्ड ही बड़े के आकार का होता है। इसके भीतरी पृष्ठ पर बहुत छोटे २ फल होते हैं जिनको लोग बीज समझते हैं। बरगद और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पीपल में ये छोटे २ फल एकीन श्रेणी के होते हैं। इन सब फलों को साइकोनस Syconus कहते हैं। कटहल

नग्नबीजी पौधों में कुछ रचनाओं को फल कहते हैं, यद्यपि वे हमारी परिभाषा के अनुसार फल नहीं हो सकते। पाइन में पुष्पयोनि-वाहक पत्तियां एक लम्बे अक्ष पर पेंचदार-क्रम में पायी जाती हैं। प्रत्येक पत्ती के ऊपर दो-दो बीज रहते हैं। कुछ समय के बाद ये ही पत्तियां कड़ी हो जाती हैं, और सब मिलकर शंक्वाकार रचना की सृष्टि करती हैं, जिसे एक फल मान कर कोन (Cone) अथवा स्ट्रोबिलस (Strobilus) के नाम से पुकारते हैं।

बीज :—बीज में प्रायः दो आवरण होते हैं, जिनमें बाहरी को बाह्यबीजावरण (Testa) और भीतरी को अन्तरबीजावरण (Tegment) कहते हैं। गर्भाधान के बाद कहीं-कहीं तीसरा परदा भी ऊपर की ओर बन जाता है, जिसे एरिलस (Arillus) कहते हैं। बाह्यावरण प्रायः चिकना होता है, पर कहीं २ वह भिन्न २ प्रकार के बहिरुद्भेदों से भी युक्त होता है, जिनमें कपास की रूई, मदार तथा कनेर आदि के रोमगुच्छ (Coma) और सहजन के पंख विशेष महत्त्व के हैं। बीजावरण के ऊपर निश्चित स्थानों पर पायी जानेवाली रचनायें नालचिन्ह, सूक्ष्मछिद्र तथा रेफ के नाम से प्रसिद्ध हैं। अन्तरावरण बहुत बारीक होता है, और कभी २ बाह्यावरण से पूर्णतः मिल जाने के कारण इसका अभाव सा मालूम होता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अधिकतर यह बीज की गुद्दी से मिला रहता है। सुपारी में गुद्दी के भीतर जगह २ पर यह धँसा हुआ रहता है, और काट कर देखने से ऐसा मालूम होता है, कि गुद्दी के भीतर नाड़ियां फैली हुई हैं। परिसिल नाम का तीसरा आवरण डिम्बनाल, सूक्ष्मछिद्र अथवा दोनों भागों से निकला रहता है। जावित्री, जो इसी प्रकार का वहिरुद्‌ मात्र है, नाल चिन्ह तथा सूक्ष्म छिद्र से उत्पन्न होकर सम्पूर्ण बीज को ढके रहती है। कमल में यह प्याले के आकार का होता है, और डिम्ब के आधार से निकलता है। इनके अतिरिक्त बीज प्रायः अन्य छोटी-छोटी रचनाओं से भी युक्त रहता है, जो दोनों सिरों पर अथवा पार्श्व में हो सकती हैं। इन्हें भी साधारणतः एरिल Aril ही कहते हैं जैसे एरण्ड में।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिच्छेद ८

बीजप्रसार (Dispersal of seeds)

अपने समुचित शारीरिक विकास तथा वंशपरम्परा को स्थायी रखने के लिये पौधों को अपना निवास-स्थान समय २ पर बदलना पड़ता है। क्षुद्र श्रेणी के पौधे अपना स्थान परिवर्तन उन छोटे २ सन्तानोत्पादक कोष्ठों द्वारा करते हैं, जिन्हें स्पोर कहते हैं और जो प्रतिकूल परिस्थिति में सुप्तावस्था धारण करने की क्षमता रखते हैं, और बहुत सूक्ष्म होने के कारण अधिक संख्या में उत्पन्न होकर वायु आदि वाह्य साधनों द्वारा अपना दूरदेशीय वितरण भी करा लेते हैं। उच्च श्रेणी के स्थलीय पौधों में कुछ कारणों से स्पोर का स्थान बीज को लेना पड़ता है, जिसमें स्पोर की ही तरह सुषुप्ति तथा वितरण की क्षमता होती है।

पुष्पवाले पौधों में जातिप्रसार के लिये यद्यपि बीज और फल सबसे उत्तम साधन हैं, तथापि उनमें यह कार्य अन्य भागों द्वारा भी होता है। कहीं सन्तानोत्पादक वानस्पतिक भागों द्वारा, कहीं सम्पूर्ण पौधे द्वारा, (विच-ग्रास-जिसमें सम्पूर्ण पौधा हवा में उड़ता हुआ और बीजों को बिखेरता हुआ बहुत दूर तक चला जाता है), कहीं उड़ते हुए पुष्पव्यूह द्वारा, तथा कहीं अङ्कुरित शिशु वनस्पति द्वारा (मानग्रोव) यह कार्य होता है। इन सब में वानस्पतिक सन्तानोत्पादक भागों को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छोड़कर, शेष सबों का सन्तानोत्पादक-भाग बीज ही होता है। अतः इन सबों में प्रसारित भाग चाहे जो हो, प्रसार बीज का ही कराना अभीष्ट होता है। पहले ही बतलाया गया है, कि अपरिपक्वावस्था में बीज की रक्षा तथा पोषण और परिपक्व होने पर उसका प्रसार करना ही फल का एकमात्र कार्य है। अतः कभी २ अपना प्रसार करके और कभी २ विचित्र स्फोटन के द्वारा वे बीज प्रसार कराते हैं। इसलिये हम कह सकते हैं, कि यद्यपि फलप्रसार और बीजप्रसार दो भिन्न २ क्रियायें हैं, पर बीजप्रसार कराना ही दोनों का एक मात्र अभिप्राय है।

बीज प्रसार की आवश्यकता—बतलाया गया है, कि शारीरिक विकास और जाति प्रसार के लिये बीज-प्रसार होता है। बीजों द्वारा पौधों का जो अत्यात्पादन होता है उसके कारण नवजात सन्तानों के बीच एक गहरा जीवन-संग्राम ठन जाना अनिवार्य हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में बीज-प्रसार ही एक ऐसा उपाय हैं जिससे नवजात सन्तानों की अधिक से अधिक संख्या का अधिक से अधिक मात्रा में कल्याण हो सकता है। बीज-प्रसार की आवश्यकता पर हम दूसरी दृष्टि से विचार कर सकते हैं। जितनी ही अधिक दूरी में बीज प्रसार होता है, उतनी ही अधिक इस बात की सम्भावना बढ़ जाती है, कि पौधे नयी २ परिस्थिति वाले नये नये स्थानों को आबाद कर सकेंगे। सम्भव है कि इस तरह उन्हें बहुत सी ऐसी नयी परिस्थितियां मिल जायं जो उनके लिये बहुत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ही अनुकूल हों। इसके अतिरिक्त चूंकि अधिकांश जन्तु-संख्या अपना जीवन निर्वाह इन्हीं फलों और बीजों पर करते हैं, इसलिये दूर २ स्थानों में फैल जाने के कारण वे फल और बीज पशुपक्षी तथा मनुष्य आदि की तीक्ष्ण-दृष्टि से बच भी सकते हैं।

बीजप्रसार की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए यदि हम फलों और बीजों की रचनात्मक विभिन्नताओं पर विचार करें तो उनकी उपस्थिति आकस्मिक तथा अनावश्यक कभी न मालूम होगी बल्कि नैमित्तिक अर्थात् बीजप्रसार के लिये आवश्यक सिद्ध होगी। कुछ पौधों को छोड़कर प्रायः सभी पौधे बीजप्रसार के लिये वाह्य साधनों की सहायता लेते हैं। जो ऐसा नहीं करते, उन्हें यह कार्य स्वयं करना पड़ता है। अतः फलप्रसार तथा बीजप्रसार कहीं स्वयं पौधों द्वारा होता है, और कहीं वाह्य साधनों की सहायता से होता है।

पौधे द्वारा प्रसार—कुछ पौधों में फल इस प्रकार ज़ोर से फटता है कि उसके बीज बहुत दूर-दूर तक जाकर गिरते हैं। इसमें फल के निर्जीव तन्तुओं के भिन्न २ मात्रा में संकोच करने से स्फोटन होता है। टच-मी-नांट नाम के पौधे में भी ऐसा ही स्फोटन होता है पर यहां स्फोटन फल के सजीव तन्तुओं के टर्गर टेंशन (Turgor tension) के कारण होता है। फल के पकने के समय फल की दीवाल अन्दर के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

व्यवधानों से अलग हो जाती है, और सन्धियों पर उसके टुकड़े जुड़े रहते हैं, अन्यथा वह इन जोड़ों पर इतनी कमज़ोर होती है कि स्पर्श मात्र से कई टुकड़ों में अलग हो जाती है। जिस समय स्फोटन होता है, फल के खण्ड बड़ी तेजी से घड़ी की स्प्रिंग की तरह लपेट उठते हैं, और बीज दूर-दूर तक फेंका जाते हैं। पाधे द्वारा प्रसार होने का तीसरा बहुत रोचक उदाहरण जिरेनियम में मिलता है। इसके फल में योनिसूत्र द्वारा बना हुआ जो शूक (Awn) होता है वह पहले पांच भागों में बट जाता है। प्रत्येक के आधार पर फल के एकबीजी खण्ड जुड़े रहते हैं। सूखने पर शूक लपेट उठता है, और भीगने पर फैल जाता है। इस प्रकार की गति बार २ हुआ करती है, जिससे बीज ज़मीन पर रेंगते-रेंगते बहुत दूर तक जा सकता है, और अगर कहीं जमीन के दरार में प्रवेश कर जाता है, तो जब तक उसका उद्भेद नहीं होता, तब तक वहीं सुरक्षित होकर पड़ा रहता है। चांगेरी में मांसल परिल स्थिति-स्थापक (Elastic) होता है और बीज को ढके रहता है। छूने ही से वह बहुत तेज़ी के साथ उलट जाता है और बीज बाहर आ जाते हैं।

वाह्य साधनों द्वारा प्रसार—तीन प्रकार के वाह्य साधन बीजप्रसार में सहायक होते हैं, वायु, जल तथा जन्तु।

वायु द्वारा प्रसार:—इनमें कुछ फल या बीज तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऐसे होते हैं जो बहुत छोटे क़द के होने के कारण बहुत समय तक वायु में रह सकते हैं, और दूर २ तक उड़कर चले जाते हैं (Orchids के बीज)। दूसरे प्रकार के वायु द्वारा फैलनेवाले बीज तथा फल रोमगुच्छ. तथा पंखवत रचनाओं से युक्त होते हैं। पंखयुक्त बीज मुचकुन्द, तून तथा सहजन के होते हैं, और पंखयुक्त फल (Samara) चिरविल्व के होते हैं। माधवलता तथा बाराहीकन्द के फल भी कुछ २ पंखवत् फैले रहते हैं। इतना स्मरण रखना होगा, कि पंखयुक्त फल तथा बीज केवल ऊंचे २ वृक्षों तथा भारी २ लताओं के ही होते हैं, क्योंकि ये फल तथा बीज अधिक देर तक वायु में नहीं ठहर सकते, इसलिये ऊंचाई पर होने से अधिक तेज़ हवा के कारण नीचे तक आते २ वे कुछ न कुछ दूर तक चले ही जाते हैं। वायु द्वारा प्रसार कराने के लिये रोम तथा रोमगुच्छ अधिक उपयोगी होते हैं। रोमश तथा रोमगुच्छों से युक्त फल तथा बीज कार्पास, मन्दार तथा गेंदावर्ग में अधिक पाये जाते हैं। कपास और सेमर की रूई, मदार और कनेर का रोमगुच्छ तथा गेंदावर्ग का रोमश पुट फल तथा बीज प्रसार के ही निमित्त होता है। मकोय के पुटचक्र द्वारा बनी हुई वायुपूरित थैली का भी यही अभिप्राय है।

बहुत से पौधों में स्फोटन इस प्रकार होता है, कि बीज स्फोटन के बाद भी तभी निकलते हैं. जब फल वायु में खूब हिलता है जिससे सब बीज एक ही साथ और एक ही स्थान

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर नहीं गिरने पाते। बीजप्रसार की इस विधि को सेन्सर मेकनिज़्म (Censor Mechanism) कहते हैं। पोस्ता, स्वर्ण-क्षीरी, अतीस तथा सूर्यमुखी (यहां रोमशपुट नहीं होता) में इसी तरह प्रसार होता है।

जल द्वारा प्रसार :—जल द्वारा बहुत कम पौधों का वीजप्रसार होता है। जल में होनेवाले बहुत से पौधों का प्रसार प्रायः जन्तुओं द्वारा होता है। कमल में फलप्रसार जल द्वारा होता है। इसमें स्तम्भक बहुत बड़ा और विरल तन्तुओं का बना होता है, जिसके अन्दर वायु भरी रहती है, जिससे वह पानी के ऊपर तैरता रहता है। बहुत सी जल वनस्पतिओं में वीज वायुपूरित स्थानों से युक्त होने के कारण पानी के ऊपर तैर सकते हैं। वास्तुक, तथा मारिष ऐसे कुछ पौधों के वीज कूड़े कचड़े के साथ अक्सर दूर २ तक निकल जाते हैं, और इसीलिये ये तालाबों अथवा नालों के समीप अधिक पाये जाते हैं। कुछ पौधों के वीज कीचड़ के साथ पक्षिओं के पैर में लगकर दूर २ तक चले जाते हैं।

समुद्र प्रवाह के द्वारा जो वीजप्रसार होता है, वह विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। समुद्र तट पर होने वाले पौधों के फल तथा वीज प्रायः मोटे और जलाभेद्य आवरणों से इस लिये युक्त होते हैं कि कहीं उनके अन्दर जल प्रवेश करके उनकी उद्भेदशक्ति को न नष्ट कर दे। इन आवरणों में भी प्रायः वायुपूरित विरल तन्तु होते हैं। नारियल, बादाम तथा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुपारी के ऐसे ही फल होते हैं। नारियल के फल में इपीकार्प क्यूटीनयुक्त और चर्मवत् होता है, मीज़ोकार्प सौत्रिक और हलका होता है, तथा इन्डोकार्प पाषाणवत् कठोर होता है। जलप्रसार के कितना अनुकूल इसका फल है इसे हम स्वयं समझ सकते हैं।

जल द्वारा प्रसार कराने वाले पौधों में मानग्रोव वृक्षों का प्रसार बहुत ही विचित्र और रोचक है। इनके बीज वृक्ष से अलग होने के पहले ही अपना उद्भेद कर लेते हैं। प्रारम्भिक जड़ बढ़कर फल को छेदती हुई बाहर आ जाती है, और भाले के आकार की हो जाती है। कुछ दिनों के बाद यह शिशुवनस्पति वृक्ष से अलग होकर नीचे दलदल ज़मीन में गिर जाती है और सीधी खड़ी रहती है। कुछ समय के बाद उसके पार्श्व से जड़ें निकलकर उसे जमीन में सुदृढ़ कर देती हैं। गिरते समय यह तीर की तरह ऊपर से आती है, और ज़मीन में धंस जाती है। उपर्युक्त बातें तो प्रसार विरोधी हैं, परन्तु यदि हम इन वृक्षों के भौगोलिक विवरण की ओर ध्यान ले जाते हैं, तो मालूम होता है, कि जल के द्वारा इनका प्रसार अवश्य हुआ होगा। अमेरिका के पूर्वी किनारों तथा अफ्रिका के पश्चिमी किनारों पर होने वाली जातियों की समानता और पूर्वी मानग्रोव जातियों की समानता इस बात को सिद्ध करती हैं। फिर हमें पता चलता है कि इन्हीं शिशु वनस्पतिओं द्वारा इन वृक्षों का प्रसार भी होता है। ये दो २

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

माह तक पानी में तैरा करती हैं, और समुद्र प्रवाह के साथ पश्चिमी अफ्रिका से ब्राज़ील तक जा सकती हैं। इन शिशु वनस्पतिओं द्वारा इन वृक्षों का प्रसार होना भी असंगत नहीं है, क्योंकि दलदल की अस्थिर मिट्टी में यदि ऊपर से गिरी हुई सन्तानों का किसी कारण पैर उखड़ गया, अथवा पानी अधिक होने से वे जमीन तक पहुँच ही न सकीं, तो उनका नाश ही हो जाय, यदि कुछ समय तक पानी के ऊपर तैरते रहने की उनमें शक्ति न हो।

जन्तुओं द्वारा प्रसारः—जन्तुओं द्वारा दो तरह से वीज तथा फल प्रसार होता है। मांसल फलों का जन्तु भक्षण करते हैं और अनजान में उनके वीजों का प्रसार भी करते हैं। दूसरे प्रकार के कुछ शुष्क फल ऐसे होते हैं, जो जन्तुओं के शरीर में चिपककर दूर-दूर तक चले जाते हैं। मांसल और स्वादिष्ट फलों की खोज में जन्तु घूमा करते हैं। कहीं २ तो वे फलों को खाकर वीज छोड़ देते हैं, और कहीं कहीं वीजों को भी खा जाते हैं, जो प्रायः उनकी विष्ठा के साथ फिर वाहर आ जाते हैं, क्योंकि इनका प्रायः पाचन नहीं हो सकता। इस तरह से वीजों की उद्भेदशक्ति को भी कोई हानि नहीं पहुंचती, बल्कि कहीं २ तो वह सुधर जाती है (वरगद पीपल)। बहुत से फल खाने में रेचक होते हैं, जिससे वीज अवश्य ही बाहर आ जाते हैं। चूंकि केवल परिपक्व फलों का ही प्रसार अभीष्ट होता है, इसलिये मांसल फल पकने के पहले न तो खाने में अच्छे होते और न तो देखने में ही आकर्षक होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चिपकनेवाले फल :—बहुत से शुष्क फलों में हुक तथा हुकदार कांटे होते हैं, जिनके द्वारा वे जन्तुओं के बालों में अथवा मनुष्यों के कपड़ों में फँस जाते हैं और अपना प्रसार कर लेते हैं। हुक, हुकदार कांटों तथा इस तरह को पकड़ने-वाली रचनाओं की उत्पत्ति भिन्न २ भागों से हुई रहती है। बिछुआ में योनिछत्र अग्र पर टेढ़ा होकर हुक बना लेता है। रोमश पुट के कुछ रोम ही कांटेदार होते हैं। उत्कंटक तथा कांटा चौलाई में वृन्तपत्रों के अग्र भाग तीक्ष्ण होकर कांटे का काम करते हैं। इसी तरह अपामार्ग में परिसवर्ण-खण्ड कांटे की तरह पकड़ने का काम करता है। इनके अतिरिक्त बहुत से फलों का सम्पूर्ण पृष्ठ बहुत सूक्ष्म नोकीली रचनाओं से ढका रहता है, जिससे वे आसानी से कपड़ों में चिपक जाते हैं। शालपर्णी जाति (Desmodium) के पौधों में प्रायः ऐसे फल पाये जाते हैं। लसदार फलों के उदाहरण पुनर्नवा, चित्रक, सैल्विया तथा अतीस में मिलते हैं।

बीज तथा फलप्रसार में मनुष्य भी विशेष रूप से भाग लेता है। वह अपने भिन्न २ व्यवसायिक उद्योगों को करता हुआ जान अथवा अनजान में कितनेही बीजों तथा फलों का प्रसार करा देता है। आज भारतवर्ष में कितने ऐसे पौधे कसरत से पैदा हो रहे हैं, जो कुछ समय पहले यहां देखने को नहीं मिलते थे। सिनकोना, नासपाती, पपीता, आलू, तमाखू, मक्का, कुमारी, मिर्च तथा अनानास भारत के आदि निवासी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

न होने पर भी यहां कसरत से पाये जाते हैं। इन पौधों को हम लोगों ने जान बूझ कर अपने यहां स्थान दिया है, पर इनके अतिरिक्त बहुत से ऐसे पौधे भी हैं, जिनके वीज वाहर से आनेवाले अन्नों तथा अन्य पदार्थों के साथ अशुद्धि रूप में आते रहते हैं।

अन्त में हमें उन पौधों की ओर अपना ध्यान ले जाना है, जिनको अपनी जाति तथा वंश की रक्षा के लिये वीज-प्रसार रोकना भी पड़ता है। इन पौधों में वीजप्रसार रोकने का वही अभिप्राय है, जो अन्य पौधों में वीजप्रसार कराने से पूरा होता है। मानग्रोव्र का उदाहरण हमें पहले ही मिल चुका है। परिस्थिति की विचित्रता से उसे पहले प्रसार विरोधी व्यापार करने पड़ते है। इसमें असफल होने पर उसे फिर प्रसारसहायक व्यापार करने पड़ते हैं। ऐसा ही मनोरञ्जक उदाहरण हमें मूंगफली में मिलता है। यहां गर्भाधान के बाद गर्भाशय ज़मीन के अन्दर चला जाता है, और वहीं फल बनता हैं। चूंकि इनके वायवीय भागों को जानवर वड़े चाव से खाते हैं, इसलिये यह भय रहता है, कि उनके नष्ट हो जाने पर फल नहीं बनेगा, तो इसकी जातिरक्षा नहीं हो सकेगी। परन्तु नहीं, भौमिक शाखाओं के रहने से इनमें फल बन जाता है, और जातिरक्षा हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिच्छेद ६

वीजरचना तथा वीजोद्भेद

आवृतवीजी पौधों के जीवन-चक्र का अन्तिम भाग इस अध्याय में पूरा होगा। इनके जीवन-चक्र के जिस स्थान से हमने इनकी रचनाओं पर विचार करना प्रारम्भ किया था उस पर पहुँचने के लिये केवल एक सीढ़ी रह गयी है जिसे हम वीजोद्भेद की सीढ़ी कह सकते हैं। वीजप्रसार की मंज़िल के बाद वीजोद्भेद की मंज़िल रह जाती है, जिसके बाद हमारे सामने एक नये पौधे का नया जीवन-चक्र आ जाता है और पहला पौधा विस्मृत सा हो जाता है। वीजप्रसार के बाद वीज प्रायः कुछ समय तक सुप्तावस्था में पड़े रहते हैं। जब वीजोद्भेद के लिये अनुकूल अवस्थायें मिलती हैं तो वे अपनी वृद्धि फिर प्रारम्भ कर देते हैं। परन्तु ऐसा देखा गया है कि वीजप्रसार के बाद यदि उद्भेदानुकूल अवस्थायें प्राप्त हो जाती हैं तो वीज प्रायः तुरन्त ही वीजोद्भेद नहीं करने लगते। वीजप्रसार और वीजोद्भेद के बीच में उन्हें कुछ समय तक विश्राम लेने की आवश्यकता पड़ती है।

यह विश्रामकाल (Resting period) प्रायः कुछ हफ्तों से लेकर वर्षों तक का होता है। अनुकूल अवस्थाओं के न मिलने पर कुछ वीज तो सैकड़ों वर्षों तक पड़े रहने पर भी वीजोद्भेद के योग्य बने रहते हैं, पर कुछ ऐसे भी होते हैं, जो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

एक हफ्ते के बाद ही व्यर्थ हो जाते हैं। विश्रामकाल में वीज प्रायः मिट्टी तथा पत्तिओं के नीचे पड़े रहते हैं। कुछ तो जिरेनियम की तरह ज़मीन को दरारों में चले जाते हैं। मूगफली का फल ही ज़मीन के अन्दर बनता है। अलसी के वीज म्यूसिलेज की सहायता से, तथा अन्य प्रकार के वीज हुक तथा अन्य प्रकार की ऐसी ही पकड़ने वाली रचनाओं के द्वारा ज़मीन को पकड़े रहते हैं।

विश्रामकाल के बीत जाने पर और अनुकूल अवस्थाओं के प्राप्त होने पर उनका वीजोद्भेद प्रारम्भ हो जाता है। इस अध्याय में हमें यही देखना है कि वीजोद्भेद के समय वीज की आन्तरिक रचना कैसी होती है और वीजोद्भेद के समय उसमें कौन-कौन से परिवर्तन होते हैं जिससे हमें पहले की तरह एक नया पौधा मिल जाता है। इसी अभिप्राय से भिन्न-भिन्न प्रकार के वीजों का वर्णन नीचे किया गया है।

चने का वीज:—परीक्षा करने के पहले वीज को कम से कम १२ घण्टे पानी में भिगो देना चाहिये। वीज का एक सिरा कुछ नोकीला और मुड़ा हुआ रहता है, और दूसरा गोल होता है। वीज एक ओर कुछ थोड़ा सा नतोदर मालूम पड़ता है। इसी पृष्ठ पर नोकीले सिरे से दूसरे सिरे तक एक रेखा होती है। नोकीले भाग के समीप इसी रेखा पर सूक्ष्म छिद्र होता है और इसके समीप ही काला नाल-चिन्ह होता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वीज का भूरा छिलका वीजावरण होता है। इसे हटा देने पर सम्पूर्ण भाग गर्भ का रह जाता है। इसे यदि दबाया जाय तो यह मोटे मांसल भागों में अलग हो जाता है, जो वीजपत्र (Cotyledons) होते हैं। एक वीजपत्र के भीतरी पृष्ठ पर नोकीले सिरे के समीप एक पोली रचना दिखायी पड़ती है, जो भावी पौधे की अक्ष होती है। इस अक्ष के नोकीले सिरे को, जो वीज के नोकीले भाग की ओर होता है, प्रारम्भिक जड़ (Radicle) कहते हैं। अक्ष के दूसरे सिरे को भ्रूणकलिका (Plumule) कहते हैं। प्रारम्भिक जड़ और भ्रूणकलिका दोनों के बीच में अक्ष से दोनों वीजपत्र जुड़े रहते हैं। शिम्बीवर्ग के प्रायः सब पौधों में वीज इसी तरह के होते हैं।

(२) एरण्ड का वीज :—इसमें वीजावरण बहुत कड़ा होता है। इसके एक सिरे पर सफेद परिल होता है। वीजावरण के हटा देने पर गर्भ और इन्डोस्पर्म रह जाते हैं। वीजावरण को हटा कर यदि शेष भाग को खड़ेखड़ दो बराबर भागों में बांट दें, तो अन्दर की सब रचनायें दीखने लगती हैं। ऊपर का स्वेत भाग जिसके अन्दर गर्भ छिपा रहता है इन्डोस्पर्म होता है। इसके अन्दर दो पतले पत्रवत् वीजपत्र होते हैं। दोनों वीजपत्रों के बीच में भ्रूणकलिका और परिल की ओर सिरे पर प्रारम्भिक जड़ होती है। इसमें यही विशेषता है, कि यहां भोज्य-पदार्थ इन्डोस्पर्म नाम के विशेष तन्तु में संचित रहते हैं, और चने में वे वीजपत्रों के अन्दर होते हैं। इन्डोस्पर्म-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

युक्त बीजों को अल्ब्यूमिनस (Albuminous) और शेष को एक्स-एल्ब्यूमिनस बीज कहते हैं।

(३) **सेम का बीज**—बीजावरण के ऊपर लम्बा, पतला, सफेद रेखाकार भाग नाल-चिन्ह का होता है। इसके एक सिरे पर सूक्ष्म छिद्र होता है। बीजावरण के अन्दर सम्पूर्ण भाग गर्भ का होता है, जिसमें प्रारम्भिक जड़, भ्रूण-कलिका तथा दो मोटे बीजपत्र होते हैं। प्रारम्भिक जड़ गर्भ के बाहर बीजावरण के एक पाकेट में पड़ी रहती है। भ्रूणकलिका दोनों बीजपत्रों के बीच में होती है। अक्ष का दूसरा सिरा भी पत्रवत् रचनाओं से युक्त होता है।

बीजोद्‌भेदः—जब बीज को ऐसी मिट्टी में बो देते हैं जहां उद्‌भेदानुकूल सारी अवस्थायें मौजूद रहती हैं, तो उसमें वृद्धि प्रारम्भ हो जाती है। सूखा बीज उपयुक्त अवस्थाओं में पड़ने के बाद जितने समय में अंकुरित होता है, उतने समय में उसमें जितने भी परिवर्तन होते हैं सबको मिलाकर बीजोद्‌भेद कहते हैं। उद्‌भेद के लिये आर्द्रता, ताप तथा आक्सीजन का होना बहुत आवश्यक है। यदि एक लकड़ी के दोनों सिरों पर और उसके बीच में एक २ सेम के बीज रखकर आलपीन लगा दें और लकड़ी को एक बीकर में (जो उबाले हुए पानी से आधा भरा हुआ है) खड़ी करके इस प्रकार रख दें कि बीचवाला बीज पानी में आधा डूबा हुआ हो, तो कुछ दिन के बाद बीचवाला बीज पूर्णतः अंकुरित हो जायगा, पर दोनों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सिरों पर के वीज अंकुरित न होंगे। बीचवाला वीज तीनों आवश्यक उपकरणों की उपस्थिति में अंकुरित होता है, पर ऊपर के वीज को आर्द्रता तथा नीचे के वीज को आक्सीजन नहीं मिलता। इससे उनका वीजोद्भेद नहीं होता। इस प्रयोग से यह सिद्ध होता है कि तीनों उपकरण वीजोद्भेद के लिये आवश्यक है।

वीजोद्भेद के प्रारम्भ में प्रारम्भिक जड़ पहले बढ़ती है, क्योंकि सूक्ष्म छिद्र के समीप होने से सूक्ष्म छिद्र से प्रवेश करने वाला जल पहले इसी भाग को मिलता है। इसलिये इसमें वृद्धि होने लगती है, और यह पानी सोखकर फूल भी जाता है और सूक्ष्म छिद्र के समीप वीजावरण को तोड़ कर बाहर निकल आता है। वीज चाहे जिस तरह रखा हो, सबसे पहले निकला हुआ प्रारम्भिक जड़ का अंकुर नीचे की ओर बढ़ने लगता है और ज़मीन के अन्दर क्रमशः फैल जाता है।

इसके बाद की घटनायें भिन्न-भिन्न प्रकार के वीजों में भिन्न-भिन्न तरह से होती हैं। अल्व्यूमिनस वीजों में कम से कम एक वीजपत्र प्रायः जमीन के अन्दर रह जाता है और इन्डो-स्पर्म से भोज्यपदार्थों का शोषण करके वृद्धिशील भागों को देता है। इस प्रकार के वीजोद्भेद को हाइपोजियल (Hypogeal) कहते हैं। प्रायः सभी एकदली वीजों में यही होता है। द्विदली वीजों में भी जो बड़े होते हैं और जिनके वीजपत्रों में पर्याप्त मात्रा में भोज्य पदार्थ संचित रहते हैं ऐसा ही वीजोद्भेद होता है जैसे बंगाली चना (जिसका वर्णन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऊपर दिया गया है), मटर तथा आम में। दूसरे प्रकार के द्विदली बीजों में, जहां खाद्य पदार्थ पर्याप्त मात्रा में नहीं होते, यह आवश्यक होता है कि उनके बीजपत्र ऊपर आकर साधारण पत्तिओं की तरह नये खाद्य पदार्थ तैयार करें। इसलिये इन बीजों के खाद्य पदार्थ चाहे बीजपत्रों में हों या इन्डोस्पर्म में, इनके बीजपत्र बीजोद्भेद के समय ऊपर आ जाते हैं। ऐसा बीजोद्भेद इपीजियल (Epigeal) कहा जाता है। एरंड तथा सेम में यही होता है।

सेम में प्रारम्भिक जड़ के निकलने के बाद, प्रारम्भिक जड़ के बाद का अन्त का भाग बड़े वेग से बढ़ने लगता है। चूंकि इस समय तक बीजपत्र अन्दर ही बन्द रहते हैं, इसलिये यह बढ़ता हुआ भाग जिसे हाइपोकाटिल (Hypocotyl) कहते हैं, धनुषाकार हो जाता है। अधिक वृद्धि हो जानेपर इसका इतना ज़ोर पड़ता है कि बीजपत्र भ्रूणकलिका के साथ ज़मीन के बाहर आ जाते हैं, और हाइपोकाटिल सीधा हो जाता है। बीजपत्र हरे होकर साधारण पत्तिओं का काम करने लगते हैं। एरण्ड में बीज़पत्र पहले इन्डोस्पर्म के अन्दर संचित पदार्थों का शोषण करके मोटे होते हैं, और फिर बाहर निकलते हैं।

मक्का का बीज—एकदलो पौधों में बीजरचना तथा बीजोद्भेद जानने के लिये मक्का के बीज का उदाहरण पर्याप्त होता है। जिन मक्के के दानों को हम बीज समझते हैं वे वस्तुतः फल होते हैं। ऊपर का पर्दा पेरिकार्प और बीजावरण दोनों के मिलने से बना होता है। दाने के एक सिरे पर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

थोड़ा सा स्थान आयताकार और हलके रंग का होता है। ठीक इसके नीचे परदे के अन्दर गर्भ पड़ा रहता है। यदि दाने को खड़े खड़ और इस आयताकार भाग के बीचोबीच काटकर दो भागों में अलग कर दिया जाय तो सब रचनायें स्पष्ट रूप से दीखने लगती हैं। यदि दाने के कटे हुए पृष्ट पर आयोडीन घोल छोड़ दिया जाय तो वह अधिकांश नीला हो जाता है जिससे उसके अन्दर स्टार्च की उपस्थिति सिद्ध होती है। स्टार्चयुक्त सम्पूर्ण भाग इन्डोस्पर्म का होता है। इसकी सबसे बाहरी कोष्ठतह आयोडीन घोल में पीली हो जाती है क्योंकि इसके अन्दर प्रोटीन होता है। इस कोष्ठतह को एल्यूरोन तह कहते हैं। इन्डोस्पर्म से लगा हुआ दूसरी ओर एक बीजपत्र होता है जिसे स्कूटेलम (Scutellum) कहते हैं। इससे लगा हुआ बाहर की ओर गर्भ का भाग होता है जिसमें प्रारम्भिक जड़ तथा भ्रूणकलिका होती है। ये दोनों भाग काफी बड़े होते हैं और इनके अग्रभाग कोषों से ढके रहते हैं। बीजोद्भेद के समय स्कूटेलम अन्दर ही रहकर इन्डोस्पर्म का शोषण करता है। इसकी बाहरी तह जिसे इपीथीलियल (Epithelial) तह कहते हैं, एक विश्लेषक रस (Diastase) का निर्माण करती है जिससे स्टार्च शर्करा में बदल जाता है और वृद्धिशील भागों में घोल रूप में पहुंचता है।

पहले प्रारम्भिक जड़ बीज के परदे तथा अपने कोष को फाड़ कर बाहर निकलती है और ज़मीन के अन्दर चली जाती है। इस जड़ का अधिक विकास नहीं होता, इसलिये तने के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आधार भाग से अनियमित जड़ें निकल कर पौधे का काम चलाती हैं। अनियमित जड़ों के निकलने के स्थान गर्भ में ही देखे जा सकते हैं। गर्भकलिका बढ़कर ज़मीन के ऊपर आती है और कोष को फाड़ कर शीघ्र पहली पत्ती निकल आती है। यहां गर्भकलिका का अग्र नोकीला होता है, इसलिये हाइपोकाटिल की तरह इसे धनुषाकार नहीं होना पड़ता।

एकदली पौधों में प्रायः इसी तरह बीजोद्भेद होता है। प्याज तथा खजूर में कुछ भिन्नता देखने में आती है। इनमें गर्भकलिका पहले एक पोली नलिकाकार रचना के अन्दर बन्द होकर बाहर आती है। यह नलिककार रचना मुड़कर घुटने के शक्ल की हो जाती है और तब पहली पत्ती उसके मोड़ पर प्रगट होती है।

चूंकि बहुत से बीज बहुत कठोर बीजावरण अथवा इन्डोकार्प से ढके रहते हैं इसलिये इन कठोर आवरणों को तोड़कर बाहर निकलना प्रारम्भिक जड़ ऐसे कोमल भाग के लिये असम्भव सा प्रतीत होता है। आम तथा बेर आदि में बीज दो ओर की दो रेखाओं पर कमज़ोर होते हैं इसलिये बीज अथवा गुठली बीजोद्भेद के समय दो भागों में बट जाती है और प्रारम्भिक जड़ के निकलने में आसानी होती है। खजूर में एक स्थान पर एक गोलाई में पाये जानेवाले कोष्ठ कमज़ोर होते हैं और बीजोद्भेद के समय वहीं से प्रारम्भिक जड़ निकलती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-Mo…